माणिकचन्द्र दि० जैन ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक ५२

जैन-शिलालेख-संग्रह

[भाग ५]
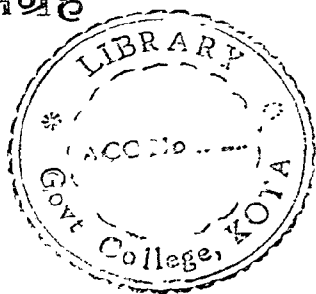
सम्पादक

डॉ० विद्याधर जोहरापुरकर

हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म० प्र०)
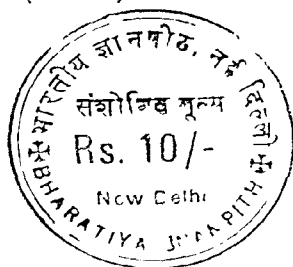
प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

माणिकचन्द्र दि० जैन ग्रन्थमाला

ग्रन्थमाला सम्पादक

डॉ० हीरालाल जैन, डॉ० आ० ने० उपाध्ये

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

प्रथम संस्करण

वीर निर्वाण संवत् २४९७

विक्रम संवत् २०२८

सन् १९७१

मूल्य तीन रुपये

मुद्रक

सन्मति मुद्रणालय,

दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी–५

Māṇikachandra D. Jaina Granthamālā : No. 52

JAINA-ŚILĀLEKHA-SAMGRAHA
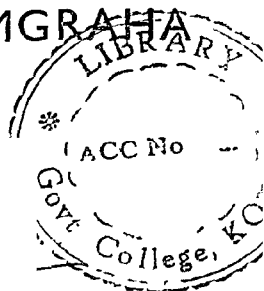
Edited by

Dr. Vidyadhar Joharapurkar
Hamidia College, Bhopal (M. P.)
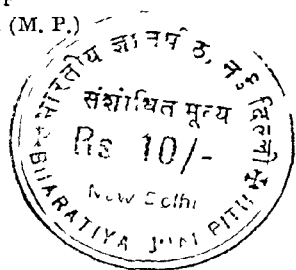
Published by

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪṬHA
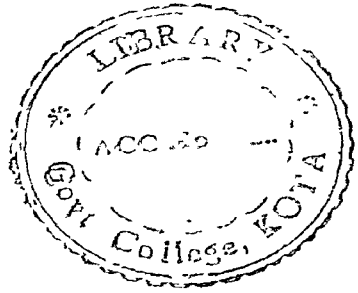
अनुक्रम

संकेतसूची

रि० इ० ए०	एन्युअल रिपोर्ट ऑफ इण्डियन एपिग्राफी
ए० इ०	एपिग्राफिया इंडिका
क० रि० इ०	कन्नड रिसर्च इन्स्टीट्यूट, धारवाड द्वारा प्रकाशित शिलालेख सूची
सा० इ० इ०	साउथ इंडियन इन्स्क्रिप्शन्स

प्रधान सम्पादकीय

इतिहास, राष्ट्र और समाज के ज्ञान-भण्डार का एक बहुत महत्त्वपूर्ण अंग है। इतिहास से ही जाना जाता है कि उस के भूतकाल में कौन-सी घटनाएँ हुई और वर्तमान जीवन का कैसे क्रम-विकास हुआ। इतिहास की ही जानकारी से लोगों को अपना भविष्य उज्ज्वल बनाने की स्फूर्ति प्राप्त है। भारतीय साहित्य के विषय में विद्वानों का यह मत है कि यद्यपि उस में दर्शन, कला व विज्ञान आदि के विकास की प्रचुर सामग्री प्राप्त होती है, किन्तु उस से प्राप्त होने वाली ऐतिहासिक सामग्री बहुत अल्प, खण्डित और दोषपूर्ण है। इस कारण जब तक भारतीय इतिहास के निर्माण के लिए इतिहासकारों को केवल साहित्य पर अवलम्बित रहना पड़ा, तब-तक भारतीय इतिहास ऐसी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं कर सका जिस से वह विदेशी विद्वानों का सम्मान प्राप्त कर सके। किन्तु इस क्षेत्र में एक बड़ी उत्क्रान्ति उस समय से हुई जब देश के विभिन्न भागों में बिखरे हुए शिलालेखों, ताम्रपत्रों और मुद्राओं आदि के रूप में पुरातत्त्व विषयक सामग्री उपलब्ध हुई। इन प्राचीन लेखों के पढ़े जाने की एक रोमांचकारी कहानी है। उस के प्रभाव से भारतीय इतिहास के क्षेत्र में एक व्यवस्था आ गयी। अनेक त्रुटित कड़ियाँ जुड़ गयीं। नये-नये राजाओं और राजवंशों का पता चला। और इन सब से भी बड़ी उपलब्धि यह हुई कि इतिहास के प्राणभूत कालक्रम का सुदृढ़ आधार प्राप्त हो गया। कौन जानता था मौर्य सम्राट् अशोक के सच्चे स्वरूप को? पालि ग्रन्थों के आधार से वह एक अत्यन्त क्रूर पुरुष था जिस ने अपने ९९ भ्राताओं को मौत के घाट उतार कर मगध का राज्य प्राप्त किया था। परन्तु जब स्वयं इस सम्राट् के द्वारा

लिखाये गये और पाषाण स्तम्भों तथा शिलाओं पर अंकित कराये गये वे पच्चीस-तीस लेख पढ़े गये जिन में उस के मानवीय गुणों, जीवन के उच्च आदर्शों तथा शासन के अनुपम सिद्धान्तों का प्रतिविम्बन हुआ है, तब संसार की आँखें खुलीं और उस ने एकमत से स्वीकार किया कि अशोक एक महान् सम्राट् था जिस ने न केवल समस्त भारतवर्ष को एक राष्ट्रीय इकाई वना डाला था, अपितु उस ने मिश्र आदि दूर-दूर के देशों तक अपने प्रतिनिधि भेजकर अपनी धर्म-नीतियों का प्रचार किया था। उस ने युद्ध-विजय को त्यागकर धर्म-विजय की नीति अपनायी थी। उसी प्रकार कौन जान सकता था गुप्तवंशीय सम्राट् समुद्रगुप्त के गुणों को और प्रताप को, यदि उन की इलाहाबाद के शिलास्तम्भ पर उत्कीर्ण प्रशस्ति प्राप्त न होती ? इत्यादि।

जैन साहित्य में उस के पुराणों और काव्यों में युग-युगान्तरों का लेखा-जोखा प्राप्त होता है। उन में ग्रथित तथा स्वतन्त्ररूप से भी उपलब्ध पट्टावलियों में दीर्घकालीन मुनि-परम्परा की लम्बी सूचियाँ भी पायी जाती हैं। किन्तु उन में तथ्यों और कल्पनाओं, वास्तविकताओं और अतिशयोक्तियों एवं लौकिक व अलौकिक बातों का इतना अधिक सम्मिश्रण पाया जाता है कि आधुनिक विद्वानों को उन पर विश्वास करना संभव नहीं होता। काल-निर्णय की कठिनाई भी इतनी बड़ी है कि ऐतिहासिक घटनाओं को भी किसी कालानुक्रम में बाँधना संभव नहीं हो पाता। इतिहास के इस साधन को जब से शिलालेखों का बल मिला, तब से जैनधर्म के इतिहास में भी एक बड़ी उत्क्रान्ति आ गयी है। हमारे साहित्य में कलिंग नरेश महा-मेघवाहन महाराज खारवेल का कहीं नाम-निशान भी नहीं पाया जाता था। किन्तु उन का जो जीवन-चरित्र ओड़िसा में उदयगिरि की हाथी-गुम्फा नामक गुफा में उत्कीर्ण पाया गया है उस ने जैनधर्म के प्राचीन इतिहास को एक सुदृढ़ आधार प्रदान किया है। अशोक के एक शिलालेख से ज्ञात होता है कि उन्होंने ईसवी पूर्व तीसरी शती में व अपने राज्य के

९ वें वर्ष में कलिंग देश पर आक्रमण किया था और उस महासंग्राम में लाखों योद्धाओं की मृत्यु हुई थी, लाखों बन्दी बनाये गये थे और लाखों लोग बेघरबार हो गये थे। इसी घटना ने अशोक के जीवन को हिंसा के मार्ग से अहिंसा की ओर लौटा दिया था। ईसवी पूर्व दूसरी शती में हुए सम्राट् खारवेल के लेख से विदित होता है कि वे आदि से ही, सम्भवतः अपने वंशानुक्रम से ही, जैनधर्मावलम्बी थे। उन का शिलालेख ही 'णमो अरहंताणं' के महामन्त्र से प्रारम्भ होता है। लेख में यह भी अंकित पाया जाता है कि जिस जैन प्रतिमा को नन्दवंशी राजा कलिंग से मगध ले गये थे उसे खारवेल सम्राट् ने वहाँ से पुनः लाकर अपनी राजधानी में प्रतिष्ठित किया। उन के जीवन में धार्मिक, नैतिक तथा लौकिक भावनाओं और घटनाओं का अद्भुत समन्वय पाया जाता है। कुमारकाल में राजोचित समस्त विद्याओं और कलाओं को सीखकर उन्होंने २४ वर्ष की आयु में राज्याभिषेक पाया, और फिर अगले १३ वर्षों में देश-विजय एवं जन-कल्याणकारी कार्यों का ऐसा अनुक्रम स्थापित किया जो अपने आप में एक आदर्श है। उन के समय में जिन गुफा मन्दिरों का निर्माण किया गया (शि० ले० सं० २, २), उन की सुरक्षा और जीर्णोद्धार आदि की व्यवस्था करना उन के उत्तराधिकारी राजाओं ने भी अपना धर्म समझा, और यह क्रम १० वीं शताब्दी तक अखण्ड रूप से चलता पाया जाता है, जब कि वहाँ के राजा उद्योतकेसरीदेव द्वारा किये गये जीर्णोद्धारादि का उल्लेख वहाँ के शिलालेखों में मिलता है (शि० ले० सं० ४,९३-९५)

यों तो अन्य भारतीय शिलालेखों के साथ-साथ जैन शिलालेखों का वाचन, सम्पादन व अनुवाद सहित प्रकाशन आदि तभी से होता चला आ रहा है जब से पुरातत्त्व विभाग की स्थापना हुई, तथा ऐपिग्राफिया इण्डिका ऐपि० कर्नाटिका आदि विशेष जर्नलों का प्रकाशन आरम्भ हुआ; किन्तु यह सामग्री उक्त जर्नलों में यत्र-तत्र बिखरी पड़ी थी और वह प्रायः जैनधर्म के इतिहास पर ग्रन्थ व लेख लिखनेवालों के लिए सरलता से उपलब्ध नहीं

थी। इस परिस्थिति में एक बड़ा सुधार तब आया जब दक्षिण भारत के एक प्राचीन तीर्थ स्थान श्रवणबेलगोल में पाये जाने वाले ५०० शिलालेखों का एक ही जिल्द में प्रकाशन हुआ। तब से जैनधर्म के साहित्यिक व ऐतिहासिक लेखों में एक सुदृढ़ वैज्ञानिक दृष्टिकोण का समावेश होने लगा। माणिकचन्द्र-दिगम्बर-जैन ग्रन्थमाला के सम्पादक पं० नाथूराम प्रेमी की तीव्र इच्छा थी कि देश के अन्य भागों में बिखरे हुए व प्रकाशित जैन शिलालेखों का भी उसी रीति से संग्रह कराकर प्रकाशन करा दिया जाये। उन की इस इच्छा और प्रयास का ही यह फल हुआ कि प्रथम भाग में श्रवणबेलगोल-शिलालेख-संग्रह के अतिरिक्त द्वितीय और तृतीय भागों में उन साढ़े आठ सौ लेखों का भी आकलन हो गया जिन की सूची डॉ० गेरिनो ने १९०८ में प्रकाशित की थी इस के पश्चात् लेखसंग्रह का कार्य बड़ा कठिन हो गया क्योंकि इन की कोई व्यवस्थित सूची भी उपलब्ध नहीं थी। किन्तु डॉ० विद्याधर जोहरापुरकर ने बड़े परिश्रम से उन छह सौ चौवन लेखों का संग्रह चौथे भाग में कर दिया जो १९०८ से १९६० तक प्रकाश में आये थे। और अब उन्हीं के द्वारा संगृहीत किया गया यह पांचवा संग्रह प्रकाशित हो रहा है, जिस में उन तीन सौ पचहत्तर जैन लेखों का संकलन है जिन का अन्यत्र स्फुट रूप से प्रकाशन १९६० ई० के पश्चात् हुआ है। इस प्रकार इस ग्रन्थमाला के इन ५ संग्रहों में २००० से ऊपर जैन लेखों का संकलन हो चुका है।

इन जैन शिलालेखों की अपनी विशेषता है। इन में अन्य लेखों के सदृश राजाओं व राजवंशों की प्रशंसा तथा उन के द्वारा किये गये युद्धों, विजयों व राज्य-विस्तार आदि का वर्णन नहीं है। इन में वर्णित घटनाएँ हैं—मन्दिरों का निर्माण, मूर्तियों की प्रतिष्ठा, जीर्णोद्धार व धार्मिक दानादि। इन घटनाओं के सम्बन्ध में ही यहाँ मुनियों की परम्पराओं का भी उल्लेख पाया जाता है और प्रसंगवश तत्कालीन व तद्देशीय नरेशों, मंत्रियों व गृहस्थों के उल्लेख भी आये हैं। इस प्रकार इन लेखों की प्रेरणा का

मूलस्रोत धार्मिक है। इन में हमें जो चिन्तन और विचार प्राप्त होता है वह है संसार की असारता और क्षणभंगुरता, पारलौकिक हित की आकांक्षा तथा समाज में धर्म का प्रचार। ये लेख समाज के उस वर्ग का विवरण प्रस्तुत करते हैं जो अपने सांसारिक सुख-साधनों का परित्याग कर समाज में अहिंसा व शान्ति की भावना बढ़ाने तथा अपने सुख से ऊपर दूसरों के दुःखों का निवारण करने की श्रेयस्कर भावना और सुसंस्कार के प्रचार हेतु अपने जीवन को लगा देते थे। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अनेक शिलालेखों में उन के उत्कीर्ण किये जाने का काल भी निर्दिष्ट है। इस से अनेक ग्रन्थकार मुनियों के काल निर्णय में व साहित्य में पायी जाने वाली पट्टावलियों के संशोधन में सहायता मिलती है। आनुषंगिक उल्लेखों से अनेक राजनैतिक, सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों की भी विशेष जानकारी प्राप्त हो जाती है। हमें पूर्ण आशा है कि इन शिलालेख-संग्रहों से जैन साहित्य और इतिहास के शोधकार्य में बड़ी सहायता मिल सकेगी।

डॉ० जोहरापुरकर ने लेख-संग्रह के अतिरिक्त इन लेखों का अध्ययन कर के नाना दृष्टियों से उन का विश्लेषण जैसा चौथे भाग की प्रस्तावना में किया था वैसा तथा उस से भी अधिक जानकारी-पूर्ण विवरण प्रस्तुत ग्रन्थ की २१ पृष्ठीय प्रस्तावना में भी किया है। उन के इस सहयोग के लिए हम उन के बहुत कृतज्ञ हैं। इस ग्रन्थमाला को अपने संरक्षण में लेकर उस की सम्पुष्टि में अपनी पूर्ण तत्परता रखने हेतु हम ज्ञानपीठ के संस्थापक श्री शान्तिप्रसादजी, श्रीमती रमाजी तथा ज्ञानपीठ के मन्त्री श्री लक्ष्मीचन्द्रजी के भी बहुत अनुगृहीत हैं।

बालाघाट
मैसूर

हीरालाल जैन
आ. ने. उपाध्ये
प्रधान सम्पादक

प्राक्कथन

प्रस्तुत शिलालेखसंग्रह का प्रथम भाग डॉ० हीरालाल जैन द्वारा सम्पादित हो कर सन् १९२८ में प्रकाशित हुआ जिस में श्रवणबेलगुल के ५०० लेख हैं। तदनन्तर सन् १९०८ में प्रकाशित डॉ० गेरिनो की जैन शिलालेख सूची के अनुसार श्री विजयमूर्ति शास्त्री ने दूसरे तथा तीसरे भाग में ५३५ लेखों का संकलन किया तथा तीसरे भाग में डॉ० गुलाबचन्द्र चौधरी ने इन पर विस्तृत निबन्ध में प्रकाश डाला। सन् १९५२ तथा १९५७ में ये भाग प्रकाशित हुए। चौथे भाग में हम ने सन् १९०८ से १९६० तक प्रकाशित ६५४ जैन लेखों का संकलन और अध्ययन प्रस्तुत किया था, इस के परिशिष्ट में नागपुर के ३२४ लेखों का संग्रह भी दिया था।

इस पाँचवें भाग में सन् १९६० के बाद के वर्षों में प्रकाशित ३७५ जैन लेखों का संकलन और अध्ययन प्रस्तुत कर रहा हूँ। यह कार्य पूरा करने के लिए मैसूर स्थित भारत सरकार के प्राचीनलिपिविज्ञ डॉ० गाइ द्वारा उन के ग्रन्थालय में अध्ययन की सुविधा मिली इस लिए हम उन के बहुत आभारी हैं। ग्रन्थमाला के प्रधान संपादकों तथा भारतीय ज्ञानपीठ के अधिकारियों के भी हम आभारी हैं जिन के आग्रह और प्रोत्साहन से यह कार्य सम्पन्न हो सका। उन सभी विद्वानों के हम ऋणी हैं जिन्होंने यहाँ संकलित लेखों को पहले सम्पादित किया है या उन का सारांश प्रकाशित किया है। हम आशा करते हैं कि यह संग्रह जैन विषयों के अध्येताओं को उपयोगी प्रतीत होगा।

दीपावली
सन् १९६९
मंडला

—*विद्याधर जोहरापुरकर*

प्रस्तावना

१. साधारण परिचय

इस संग्रह में पिछले लगभग दस वर्षों में प्रकाशित ३७५ जैन शिलालेखों का विवरण संकलित किया है।[१] पहले हम इन का साधारण परिचय प्रस्तुत करेंगे।

(अ) प्रदेशविस्तार—ये लेख भारत के नौ राज्यों तथा दो केन्द्रशासित प्रदेशों में प्राप्त हुए हैं तथा एक लेख का चित्र पैरिस म्यूजियम से प्राप्त हुआ है। लेखों की प्रदेशानुसार संख्या इस प्रकार है—

महाराष्ट्र ४०, मैसूर ७५, मद्रास ७, आन्ध्र २५, मध्यप्रदेश ९८, राजस्थान २६, उत्तरप्रदेश १००, विहार १, गुजरात १, दिल्ली १ तथा गोवा १।

(आ) भाषा व लिपि—इन लेखों में प्राकृत, संस्कृत, कन्नड व तमिल इन चार मुख्य भाषाओं का उपयोग हुआ है (मराठी व हिन्दी के कुछ अंश कुछ लेखों में हैं किन्तु इन का ठीक-ठीक विवरण नहीं मिल सका)। इस दृष्टि से लेखों की संख्या का वर्गीकरण इस प्रकार है—

प्राकृत २, संस्कृत २५६, कन्नड ११० व तमिल ७। प्राकृत व संस्कृत के सातवीं सदी तक के लेखों की लिपि ब्राह्मी है। बाद के संस्कृत लेख ब्राह्मी की उत्तराधिकारिणी नागरी लिपि में हैं। कन्नड लेख कन्नड लिपि में व तमिल लेख तमिल लिपि में हैं। यहाँ नोट करने योग्य है कि

---

१. इस संकलन के लिए इस अवधि में प्रकाशित लगभग सात हजार शिलालेखों के विवरण का हम ने अध्ययन किया। इन में लगभग सात सौ जैनों से सम्बन्धित हैं। इस संग्रह के पूर्वप्रकाशित भागों की परम्परा के अनुसार इस में श्वेताम्बर सम्प्रदाय से सम्बद्ध लेखों का विवरण नहीं दिया गया।

महाराष्ट्र में प्राप्त लेखों में लगभग एक चौथाई तथा आन्ध्र में प्राप्त प्रायः सभी लेख कन्नड भाषा में हैं।

(इ) उद्देश—इन लेखों में दो (क्र० १ व २) गुहानिर्माण के, ४० मन्दिरनिर्माण के तथा ५० आचार्यों व श्रावकों के समाधिमरण के स्मारक हैं। ४० लेखों में जैन मन्दिरों व आचार्यों को दिये गये दानों का वर्णन है। एक-एक लेख में व्रत का उद्यापन, दानशाला का निर्माण, कुँए का निर्माण तथा दो भट्टारकों के विवाद का निपटारा यह वर्ण्य विषय है।[1] लगभग ५० लेखों में यात्रियों के नाम अंकित हैं। सब से अधिक १७५ लेख मूर्तिस्थापना के विषय में हैं।

(ई) समय—सब लेख समय क्रमानुसार रखे गये हैं। इन में सब से पुरातन सन् पूर्व दूसरी सदी का है। शताब्दी क्रम से लेखों की संख्या इस प्रकार है—सन् पूर्व दूसरी सदी १, सन् पूर्व प्रथम सदी १, ईसवी सन् की चौथी सदी १, सातवीं सदी ३, आठवीं सदी २, नौवीं सदी ५, दसवीं सदी १३, ग्यारहवीं सदी ४४, बारहवीं सदी ६०, तेरहवीं सदी ४३, चौदहवीं सदी १४, पन्द्रहवीं सदी ३७, सोलहवीं सदी २१, सत्रहवीं सदी २४, अठारहवीं सदी ११ तथा उन्नीसवीं सदी २२। अन्त में दिये गये ६९ लेखों के समय का विवरण नहीं मिल सका। कई लेखों का समय लिपि के स्वरूप को देख कर पुरातत्त्व विभाग के अधिकारियों ने जैसा बताया है वैसा ही यहाँ नोट किया गया है। यह एक डेढ शताब्दी से आगे-पीछे का हो सकता है। जिन लेखों में लिपि के आधार पर समय बताया है उन से कोई निष्कर्ष निकालते समय यह बात ध्यान में रखनी चाहिए।

(उ) लेखों के कुछ मुख्य प्राप्तिस्थान—इस संकलन के लेखों का काफ़ी बड़ा भाग चार स्थानों से प्राप्त हुआ है।

---

१. क्रमशः लेख क्रमांक ११८, १७३, २६३ तथा ३०४।

[१] महाराष्ट्र के परभणी जिले में पूर्णा नदी के तीर पर उखलद ग्राम है, यहाँ के नेमिनाथमन्दिर की जिनमूर्तियों के पादपीठों पर २३ लेख मिले हैं। इन में पहले सात लेखों में उल्लिखित भट्टारक उत्तर भारत के हैं अतः ये मूर्तियाँ उत्तर भारत के किसी स्थान में प्रतिष्ठित हुई थीं तथा बाद में उखलद लायी गयी ऐसा प्रतीत होता है, इन का समय सं० १२७२ से सं० १५४८ तक का है। इन में अन्तिम सं० १५४८ का लेख तो ४१ मूर्तियों के पादपीठों पर है (इस शिलालेखसंग्रह के चतुर्थ भाग में बताया गया है कि यही लेख नागपुर के विभिन्न मन्दिरों में स्थित ७७ मूर्तियों के पादपीठों पर है)। बाद के सोलह लेख महाराष्ट्र के ही कारंजा व लातूर इन दो स्थानों के भट्टारकों से सम्बन्धित हैं तथा अधिकतर सोलहवीं-सत्रहवीं सदी के हैं।

[२] मध्यप्रदेश के उत्तर कोने में स्थित ग्वालियर के किले में २५ लेख प्राप्त हुए हैं। इन से पन्द्रहवीं-सोलहवीं सदी के ग्वालियर के राजाओं, भट्टारकों तथा श्रावकों के विषय में काफी जानकारी मिलती है।

[३] मध्यप्रदेश के दतिया जिले में स्थित सोनागिरि पहाड़ी के विभिन्न मन्दिरों में ५२ लेख प्राप्त हुए हैं। इन में से एक सातवीं सदी का और छह बारहवीं से चौदहवीं सदी तक के हैं। अतः पं० नाथूरामजी प्रेमी ने इस स्थान की प्राचीनता के बारे में सन्देह प्रकट करते हुए जो विचार प्रकट किये थे (जैन साहित्य और इतिहास पृ० ४३८) उन में अब सुधार करना होगा। हाँ, सिद्धक्षेत्र के रूप में इस की प्रसिद्धि का इन प्राचीनतर लेखों से पता नहीं चलता। इस स्थान के भट्टारक गोपाचल पट्ट के अधिकारी कहलाते थे। उन के विषय में आगे अधिक स्पष्टीकरण दिया है।

[४] उत्तरप्रदेश के दक्षिण-पश्चिम कोने में झाँसी जिले में बेतवा नदी के तीर पर स्थित देवगढ़ एक प्राचीन स्थान है। इस लेखसंग्रह के दूसरे भाग में यहाँ का नौवीं सदी का एक लेख है तथा तीसरे भाग में पन्द्रहवीं सदी के दो लेख हैं। प्रस्तुत संकलन में यहाँ से प्राप्त ९० लेखों का विव-

रण है। इन में नौवीं सदी से पन्द्रहवीं सदी तक के २० लेख हैं। शेष लेखों का समय अनिश्चित है।

इन के अतिरिक्त ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण अन्य कुछ स्थानों का आगे यथास्थान उल्लेख किया है।

२. लेखों से ज्ञात जैन साधुसंघ का स्वरूप

इस संकलन के नौवीं शताब्दी तक के लेखों में (तथा बाद के भी बहुत से लेखों में) वर्णित जैन मुनियों के विषय में यह ज्ञात नहीं होता कि वे साधुसंघ की किस शाखा के सदस्य थे। लगभग ८० लेखों में साधुसंघ के भेद-प्रभेदों के नाम मिलते हैं। इन का विवरण आगे दिया जाता है।

(अ) द्राविड संघ—सन् ९१५ के वजीरखेड ताम्रपत्रों में (ले० १४-१५) इस संघ के विशेषवीरगण—वीर्णाय्य अन्वय के लोकभद्र के शिष्य वर्धमानगुरु को मिले हुए ग्रामदान का वर्णन है। चन्दनापुरी की अमोघवसति तथा वडनेर की उरिअम्मवसति की देखभाल उन के द्वारा होती थी। यह लेख द्राविड संघ के अब तक मिले हुए सब उल्लेखों में प्राचीनतम है (पिछले संग्रह में प्राचीनतम लेख भाग २ का क्र० १६६ सन् ९९० के आसपास का है) तथा इस में वर्णित वीरगण-वीर्णाय्य अन्वय का अन्य किसी लेख में उल्लेख नहीं मिला था (पिछले संग्रह में उल्लिखित इस संघ का एकमात्र प्रभेद नन्दिगण-अरुंगल अन्वय है)। मैसूर प्रदेश के बाहर मिला हुआ द्राविड संघ का यह पहला व एकमात्र उल्लेख है। सन् १०८७ के पुडूर के लेख (क्र० ५६) में इस संघ के पल्लवजिनालय के कनकसेन आचार्य को मिले हुए भूमिदान का वर्णन है। सन् ११६७ के उज्जिलि के लेख (क्र० १०४) में द्राविड संघ-सेनगण-कौरूर गच्छ के इन्द्रसेन आचार्य को मिले हुए भूमिदान का वर्णन है। इस संघ के साथ सेनगण का सम्बन्ध पहले ज्ञात नहीं था (पिछले संग्रह में तथा इस संग्रह के भी कुछ लेखों में सेनगण मूलसंघ के अन्तर्गत बताया गया है, कौरूर गच्छ का

सम्बन्ध पिछले संग्रह में शूरस्थ गण के साथ पाया गया है, पिछले संग्रह में सेनगण के पुस्तक गच्छ, पुष्कर या पोगिरि गच्छ एवं चन्द्रकवाट अन्वय के नाम मिलते हैं)। इस संकलन का द्राविड संघ का अन्तिम लेख (क्र० १११) सन् ११९४ का है, यह येत्तिनहट्टि में मिला है तथा इस में इस संघ के अजितसेन आचार्य के स्वर्गवास का उल्लेख है।

(आ) यापनीय संघ—इस संघ के वन्दियूर गण के महावीर पण्डित को मिले हुए दान का उल्लेख धर्मपुरी के ११वीं सदी के लेख में है (क्र० ७०)। वरंगल के सन् ११३२ के लेख में (क्र० ८६) इसी गण के गुणचन्द्र महामुनि के स्वर्गवास का उल्लेख है। तेंगली के १२वीं सदी के लेख में (क्र० १२५) वर्णित वडियूर गण भी सम्भवतः इसी वन्दियूर गण से अभिन्न है, इस के आचार्य नागवीर के एक शिष्य द्वारा मूर्ति-स्थापना की गयी थी। (पिछले संग्रह में इस गण का कोई उल्लेख नहीं मिला था)। इस संघ के कण्डूर गण के आचार्य सकलेन्दु के शिष्य नाग-चन्द्र के शिष्य ने मूर्तिस्थापना की थी ऐसा लोकापुर के १२वीं सदी के लेख (क्र० ११७) से ज्ञात होता है (पिछले संग्रह में इस गण के चार लेख सन् ९८० से तेरहवीं सदी तक के हैं, यापनीय संघ के अन्य छह गणों के नाम पिछले संग्रह में मिले हैं—कुमिलि या कुमुदि, पुन्नागवृक्षमूल, कारेय, कनकोपलसंभूतवृक्षमूल, श्रीमूलमूल तथा कोटिमडुव)।

(इ) वागट संघ—इस के आचार्य सुरसेन का उल्लेख कटोरिया के सन् ९९५ के एक मूर्तिलेख (क्र० २१) में मिलता है। इसी संघ के धर्मसेन आचार्य का उल्लेख सन् १००४ के अजमेर संग्रहालय के एक मूर्ति-लेख (क्र० ३०) में मिलता है (पिछले संग्रह में इस संघ का नाम नहीं मिला था, काष्ठासंघ के चार गच्छों में एक का नाम वागड है किन्तु इस के भी कोई लेख प्राप्त नहीं हैं।)।

(ई) पुन्नाट गुरुकुल—इस परम्परा के आचार्य अमृतचन्द्र के शिष्य विजयकीर्ति का नाम सुलतानपुर के सन् ११५४ के आसपास के एक मूर्तिलेख

(क्र० ९८) में मिला है (पुन्नाट संघ बाद में काष्ठासंघ के एक गच्छ के रूप में परिवर्तित हुआ तथा इस का नाम भी लाडबागड गच्छ हो गया, इस का विवरण हमारे 'भट्टारक सम्प्रदाय' में दिया है, शिलालेखों में पुन्नाट परम्परा का उल्लेख इसी लेख में सर्वप्रथम मिला है) ।

(उ) माथुरसंघ—नासून से प्राप्त सन् ११६० के मूर्तिलेख(क्र० १०१) में इस संघ के आचार्य चारुकीर्ति का उल्लेख मिलता है । बघेरा के सन् ११७५ के मूर्तिलेख (क्र० १०७) में भी माथुर संघ के श्रावक दूलाक का नाम उल्लिखित है (इस संघ के बारहवीं सदी के तीन उल्लेख पिछले संग्रह में हैं, काष्ठासंघ के एक गच्छ के रूप में इस के तीन लेखों का विवरण आगे देखिए) ।

(ऊ) काष्ठासंघ—ग्वालियर से प्राप्त सन् १४५३ के मूर्तिलेख में इस संघ के माथुर गच्छ के किसी पण्डित का नाम प्राप्त होता है (क्र० २०३) । सोनागिरि के सन् १५४३ के मूर्तिलेख (क्र० २३९) में काष्ठासंघ-पुष्करगण के भ० जससेन का उल्लेख है (हम ने भट्टारक सम्प्रदाय में बताया है कि पुष्करगण माथुरगच्छ का नामान्तर था, इसी पुस्तक में सं० १६३९ का फतेहपुर का एक लेख दिया है (पृ० २२९) जिस में इस परम्परा के भ० यशःसेन का उल्लेख है, ये यशःसेन सम्भवतः उपर्युक्त जससेन से अभिन्न थे) । इस संकलन का काष्ठासंघ का अगला लेख सन् १६१३ का है, यह उखलद में प्राप्त मूर्तिलेख है (क्र० २५६) तथा इस में भ० जसकीर्ति का नाम अंकित है । इन के गच्छ का नाम नहीं बताया है । सोनागिरि में प्राप्त सन् १६४४ के लेख में (क्र० २६६) काष्ठासंघ-नन्दीतटगच्छ के भ० केशवसेन, भ० विश्वकीर्ति तथा ब्र० मंगलदास की चरणपादुकाएँ प्रतिष्ठित होने का उल्लेख है (हम ने भट्टारक सम्प्रदाय में (पृ० २९४) इन तीनों से सम्बद्ध अन्य विवरण दिया है) ।

(ऋ) मूलसंघ—इस संघ के ५ गणों के लगभग ६० उल्लेख इस संकलन में आये हैं । इन का विवरण इस प्रकार है ।

(१) **सूरस्थ गण**—कादलूर ताम्रपत्र में (क्र० १७) इस गण के एलाचार्य को मिले हुए ग्रामदान का वर्णन है। सन् ९६२ के इस लेख में इन के पूर्व के चार आचार्यों के नाम—प्रभाचन्द्र, कल्नेलेदेव, रविचन्द्र तथा रविनन्दि—दिये हैं अतः इस परम्परा का अस्तित्व सन् ९०० के लगभग प्रमाणित होता है (इस गण का यही प्राचीनतम लेख है)। अक्किगुन्द के १२वीं सदी के लेख (क्र० ११८) में इस गण के जयकीर्ति भट्टारक की शिष्याओं के व्रत-उद्यापन का वर्णन है। अलदगेरि के तेरहवीं सदी के तीन लेखों में (क्र० १६३-५) इस गण की नागचन्द्र—नन्दिभट्टारक—नयकीर्ति इस आचार्यपरम्परा का उल्लेख है। ये लेख इन के शिष्यों के समाधिमरण के स्मारक हैं। इस संकलन में इस गण के उपभेदों का उल्लेख नहीं आ पाया है (पिछले संग्रह में कौरूर गच्छ तथा चित्रकूटान्वय इन उपभेदों के नाम मिले हैं, कहीं-कहीं सूरस्थगण सेनगण का नामान्तर माना गया है)।

(२) **सेनगण**– पन्द्रहवीं सदी के केरूर के मूर्तिलेख (क्र० २२८) में इस गण के गुणभद्र आचार्य का उल्लेख है। सन् १६१४ के सोनागिरि के मूर्तिलेख (क्र० २५८) में पुष्करगच्छ-ऋषभसेनान्वय के विजयसेन व लक्ष्मीसेन के नाम उल्लिखित हैं (यहाँ सेनगण का नाम नहीं है किन्तु उक्त गच्छ व अन्वय इसी गण के अन्तर्गत थे यह अन्य लेखों से मालूम हुआ है)। यहीं के सन् १८७३ के दो मूर्तिलेखों में इस गण के लक्ष्मीसेन का उल्लेख है (पिछले संग्रह में सेन-परम्परा के उल्लेख सन् ८२१ से प्राप्त हुए हैं, इस के ज्ञात उपभेदों का ऊपर द्राविड संघ के परिच्छेद में उल्लेख कर चुके हैं)।

(३) **देशीगण**—सन् १०८७ के पुदूर के लेख (क्र० ५५) में इस गण के पुस्तकगच्छ के पद्मनन्दि मलधारिदेव को मिले हुए भूमि दान का वर्णन है। हलेबीड के ११वीं सदी के लेख में इसी गच्छ के नेमिचन्द्र भट्टारक के शिष्यों द्वारा मूर्ति स्थापना का उल्लेख है (क्र० ६६)। चितापुर के १२वीं

सदी के लेख में इसी गच्छ के एक मन्दिर के जीर्णोद्धार का वर्णन है (क्र० १२६)। इसी समय के पेद्दतुंवळम् के मूर्तिलेख (क्र० १३०) में इस गच्छ के चन्द्रकीर्ति भट्टारक का नाम प्राप्त होता है। स्तवनिधि के सन् १४०० के लेख (क्र० १८३) में इस गच्छ के वीरनन्दि के उपदेश से मन्दिर निर्माण होने का उल्लेख है। हुगरिटगे के सन् १२२४ के लेख में पुस्तकगच्छ के गोमिनि अन्वय के देवचन्द्र आचार्य के समाधिमरण का उल्लेख है (क्र० १३९) इस अन्वय का यह एकमात्र उल्लेख ज्ञात हुआ है (अन्यत्र देशीगण-पुस्तकगच्छ को कोण्डकुन्दान्वय के अन्तर्गत कहा गया है)। खजुराहो के सन् ११५८ के लेख (क्र० १००) में देशी गण के राजनन्दि के शिष्य भानुकीर्ति पण्डित का नाम प्राप्त हुआ है, इस में गच्छ या अन्वय का कोई उल्लेख नहीं है (पिछले संग्रह में देशीगण के लेख सन् ८६० से प्राप्त हुए हैं, इस के ज्ञात अन्य उपभेद आर्यसंघग्रहकुल, चन्द्र-कराचार्याम्नाय तथा मैणदान्वय हैं, पुस्तकगच्छ के उपभेदों में पिछले संग्रह में पनसोगेवलि, इंगुलेश्वर वलि तथा वाणदवलि इन तीन के नाम उल्लिखित हैं)।

(४) **काणूर गण**— सन् ११२५ के कोलनुपाक के लेख में इस गण के मेपपापाण गच्छ के कुछ आचार्यो के नाम हैं (क्र० ८१) किन्तु इसका विवरण नहीं मिल सका (पिछले संग्रह में इस गण के लेख दसवीं सदी से प्राप्त हुए हैं, इसके अन्य ज्ञात गच्छों का नाम तिन्त्रिणीक तथा पुस्तक है)।

(५) **बलात्कार गण**— इस का नामान्तर सरस्वती गच्छ है। उखलद तथा सोनागिरि में प्राप्त सन् १२१५ के मूर्तिलेखों (क्र० १३५–८) में इस गच्छ के धर्मचन्द्र भट्टारक का उल्लेख मिला है (इनमें गण का नाम नहीं है, केवल मूल-संघ-सरस्वती गच्छ का उल्लेख है)। केंभावी के सन् १३४० के लेख (क्र० १८०) में इस गण के लोकचन्द्र आचार्य के समाधिमरण का उल्लेख है।

चित्तौड़ के सन् १३०० के लेख (क्र० १५२) से उत्तरभारत में इस

गण की आचार्य परम्परा इस प्रकार मालूम हुई है—केशवचन्द्र (जो तीन विद्याओं में पारंगत थे तथा जिनके एक सौ एक शिष्य थे)—देवचन्द्र-अभयकीर्ति–वसन्तकीर्ति–विशालकीर्ति–शुभकीर्ति–धर्मचन्द्र (जिनके शिष्य पुण्यसिंह ने मानस्तम्भ की स्थापना उक्त वर्ष में की थी)। देवगढ़ के एक स्तम्भलेख (क्र० १७२) में केशवचन्द्र, अभयकीर्ति तथा वसन्तकीर्ति के नाम हैं। चित्तौड़ के एक अन्य लेख में (क्र० १५३) विशालकीर्ति–शुभ-कीर्ति–धर्मचन्द्र यह परम्परा उल्लिखित है। इस संग्रह के प्रथम भाग के एक लेख में वसन्तकीर्ति–विशालकीर्ति–शुभकीर्ति–धर्मभूषण यह परम्परा दी है (क्र० १११) यहाँ संकलित लेखों से उक्त आचार्यों के समयनिर्धा-रण में सहायता मिलेगी। इन के अभाव में पट्टावली के आधार पर हम ने भट्टारक सम्प्रदाय में जो समयनिर्देश किया था उस में अब सुधार करना होगा। वसन्तकीर्ति के पूर्ववर्ती तीन आचार्यों का शिलालेखीय उल्लेख भी पहली बार इस में ज्ञात हुआ है।

उत्तर भारत में बलात्कारगण की सात शाखाएँ पन्द्रहवीं सदी में स्थापित हुईं, इनका विवरण हमारे भट्टारक सम्प्रदाय में दिया है। इस संक-लन में इन के विभिन्न आचार्यों के जो लेख प्राप्त हुए हैं उन का विवरण इस प्रकार है—सूरत शाखा के भ० विद्यानन्दि उखलद के दो मूर्तिलेखों (क्र० १९७ व २२०) में सन् १४४२ तथा १४७० में उल्लिखित हैं। दिल्ली-जयपुर शाखा के भ० जिनचन्द्र ग्वालियर और उखलद के सन् १४५७, १४६५ तथा १४९२ के मूर्तिलेखों (क्र० २०४-५ तथा २२७) में उल्लि-खित हैं। नागौर शाखा के भ० धर्मकीर्ति का उखलद के सन् १४७० के मूर्तिलेख (क्र० २१९) में उल्लेख है। अटेर शाखा के भ० सिंहकीर्ति ग्वालि-यर के सन् १४७४ के मूर्तिलेख (क्र० २२३) में उल्लिखित हैं। जेरहट शाखा के भ० ललितकीर्ति राणोद के सन् १६१८ के मूर्तिलेख (क्र० २५९) में उल्लिखित हैं (इस परम्परा के समय क्रम को देखते हुए यह लेख ललितकीर्ति के पट्टशिष्य धर्मकीर्ति का होना चाहिए, सम्भवतः लेख

पढ़ते समय उन का नाम अस्पष्ट या खण्डित होने से छूट गया है)। अटेर शाखा के भ० विश्वभूषण का उल्लेख सन् १६५१ तथा १६३० के सोनागिरि के दो लेखों (क्र० २६९ व २७२) में है। इसी शाखा के भ० देवेन्द्रभूषण सन् १७८० के सोनागिरि के लेख (क्र० २७८) में उल्लिखित हैं। सन् १७९१ के वहीं के लेखों (क्र० २८३-४) में इसी शाखा के भ० जिनेन्द्रभूषण व महेन्द्रभूषण का उल्लेख है। वहीं के सन् १८११ के लेख में विश्वभूषण से सुरेन्द्रभूषण तक सात भट्टारकों की परम्परा का वर्णन है (क्र० २८५) तथा सुरेन्द्रभूषण के समय के अन्य लेख (क्र० २८६-९ तथा २९३) भी यहाँ प्राप्त हुए हैं। इन के बाद इस परम्परा के भ० राजेन्द्रभूषण लेख क्र० २९७ और ३०१ में तथा भ० चारुचन्द्रभूषण लेख क्र० ३०० व ३०५ में उल्लिखित हैं, ये लेख भी सोनागिरि के ही हैं।

दक्षिण में बलात्कारगण की जो शाखाएँ थीं उन में कारंजा शाखा व उस की लातूर उपशाखा के लेख उखलद में प्राप्त हुए हैं। इन में सन् १५८४ में धर्मचन्द्र, धर्मभूषण, देवेन्द्रकीर्ति, अजितकीर्ति यह परम्परा लेख क्र० २४२-४ में उल्लिखित है। सन् १६१६ और १६२० के लेख क्र० २५७ तथा २६०-२ में भ० विशालकीर्ति का तथा सन् १६४४ और १६५४ के लेख क्र० २६७-८ में धर्मचन्द्र—धर्मभूषण—विशालकीर्ति—अजितकीर्ति इस परम्परा का उल्लेख है। पहले हम ने भट्टारक सम्प्रदाय में इस शाखा का जो विवरण दिया है उस में इन लेखों से काफी वृद्धि हुई है।

३. लेखों से ज्ञात जैन श्रावक समाज का स्वरूप

उत्तर भारत का जैन गृहस्थ समाज विभिन्न जातियों में विभाजित था। इन जातियों की परम्परागत संख्या ८४ है। इस संकलन में इन में से दस जातियों का उल्लेख मिलता है। इन का विवरण इस प्रकार है।

सन् ९२३ में राजोरगढ़ के शान्तिनाथ मन्दिर के निर्माता सर्वदेव धर्कट कुल के थे (क्र० १६) (अन्यत्र इस कुल को धक्कड़ या धाकड़

जाति कहा गया है)।

सन् ११३३ के बडोह के मूर्तिलेख (क्र० ८७) में प्राग्वाट कुल के जाल्हण का नाम अंकित है (इस कुल का नाम अन्यत्र पोरवाड जाति के रूप में मिलता है)। इसी कुल के यशोनाग का वर्णन चित्तौड़ के १२वीं सदी के लेख में (क्र० ११३) है तथा देवगढ़ के इसी समय के मूर्ति-लेख (क्र० १७१) में वर्णित धन्नाक भी प्राग्वाट कुल के बताये गये हैं।

लखनऊ संग्रहालय के सन् ११५३ के मूर्तिलेख (क्र० ९७) में लम्बकंचुक अन्वय के गोहड का उल्लेख है (इस अन्वय का परिचित नामान्तर लमेचू जाति है)। सोनागिरि के सन् १८६८ के मूर्तिलेख (क्र० ३०१) में इसी अन्वय के उदयसेन व खड्गराज के नाम अंकित हैं।

सिरपुर के अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ मन्दिर के सन् १२७८ के लेख में श्रीमाल वंश के संघपति जगसीह का उल्लेख है (क्र० १४४)।

चक्रनगर के सन् १२७९ के तीन मूर्तिलेखों में गोलाराटक अन्वय के भोजदेव व कीकदेव के नाम मिलते हैं (क्र० १४५-७) (इस का परिचित नाम गोलाराडा जाति है)। ग्वालियर के सन् १४६८ के मूर्तिलेख में (क्र० २०६) भी इस जाति का नाम मिलता है।

बघेरवाल जाति के साह जीजाक का उल्लेख चित्तौड़ के तेरहवीं सदी के तीन लेखों (क्र० १५३-५) में है। वहाँ के कीर्तिस्तम्भ के निर्माता के रूप में वे इतिहास में प्रसिद्ध हैं। उन के पुत्र पुण्यसिंह या पूर्णसिंह की विस्तृत प्रशंसा लेख क्र० १५३ में मिलती है। इस जाति का दूसरा महत्त्वपूर्ण उल्लेख रामपुरा के सन् १६०७ के लेखों (क्र० २५३-४) में मिलता है जिसमें वहाँ के दीवान पाथूशाह के परिवार का विस्तृत परिचय दिया गया है।

ग्वालियर के सन् १४६५ के मूर्तिलेख (क्र० २०५) में ऊकेश अन्वय के महीदेव का नाम अंकित है (इस अन्वय का परिचित नाम ओसवाल जाति है)।

उखलद के सन् १४७१ के मूर्तिलेख (क्र० २२०) में सिंहपुर वंश के तेजा का नाम प्राप्त होता है (अन्यत्र इस वंश का नाम सिंहपुरा जाति मिलता है)।

सोनागिरि के सन् १५४३ तथा १८६७ के मूर्तिलेखों में अग्रवाल जाति के गर्गगोत्र तथा मीतल गोत्र का उल्लेख मिला है (क्र० २३९ तथा ३००)।

रेवासा के सन् १६०४ के लेख में खंडेलवाल जाति के कुम्भा का उल्लेख है (क्र० २५१) तथा सोनागिरि के सन् १८२७ के मूर्तिलेख (क्र० २८८) में इसी जाति के सभासिंघ का नाम मिलता है। सोनागिरि के दो अन्य मूर्तिलेखों (क्र० ३०२-३) से सन् १८७४ में इसी जाति के सेठ सुपुण्यचन्द का पता चलता है।[1]

दक्षिण भारत के श्रावकों के उल्लेखों में जाति नाम नहीं मिलते। कुछ लेखों में उन के पद या व्यवसाय के सूचक नाम प्राप्त होते हैं। गावुण्ड या गामुण्ड (लेख क्र० १८, ३६ आदि) ग्राम प्रमुखों की उपाधि थी (इस का संक्षिप्त रूप गौंडा या गौडा दक्षिण के व्यक्ति नामों में अब भी मिलता है)। कम्मटकार (लेख क्र० ८०) टकसाल के कर्मचारियों का व्यवसायदर्शक नाम था। पेर्गडे या हेग्गडे नगर के अधिकारी का पदनाम था (लेख क्र० ८१, ९६ आदि) (कर्णाटक में उपनाम के रूप में हेगडे अब भी प्रचलित है)। सामन्त (लेख क्र० ४१), महाप्रभु (लेख क्र० ५४), दण्डनायक (लेख क्र० ५५), महावड्डव्यवहारि (लेख क्र० १२२), महाप्रधान (लेख क्र० १५०) ये अन्य पदनाम जैन व्यक्तियों के सम्बन्ध में मिले हैं।

---

१. पिछले संग्रह व हमारे भट्टारक में सम्प्रदाय उल्लिखित अन्य जातियों के नाम ये हैं—राइकवाल, गंगराडा, गोलसिंघारा, पल्लीवाल, गुजरपल्लीवाल, पद्मावतीपल्लीवाल, उज्जेनीपल्लीवाल, हुंबड, गोलापूर्व, परवार, सैतवाल, गंगवाल, गंगेरवाल, जांगडा पोरवाड, जैसवाल, नरसिंहपुरा, नागद्रा, नेवा, बरहिया, भट्टपुरा, मेवाडा, रत्नाकर।

४. आर्यिका व श्राविका समाज

जैन संघ में आर्यिकाओं व श्राविकाओं का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस संकलन के लगभग ४० लेखों में इन के नाम मिलते हैं।

नौवीं शताब्दी के मैसूर के लेख (क्र० ६) में मल्लवे बसदि का उल्लेख है, नाम से स्पष्ट है कि यह मन्दिर मल्लवे नामक श्राविका ने बनवाया था। बजीरखेड के सन् ९१५ के ताम्रपत्र (क्र० १५) में वड्नेर की उरिअम्मवसति का उल्लेख भी इसी प्रकार का है। कादलूर ताम्रपत्र में (क्र० १७) सन् ९६२ में गंगवंश की रानी कल्लब्बा द्वारा निर्मित मन्दिर का उल्लेख है। बम्बई संग्रहालय के दसवीं सदी के एक लेख (क्र० २४) में तिरलौ नामक महिला द्वारा श्रीनाडुलूर के मन्दिर में मूर्ति स्थापना का उल्लेख है। अजमेर संग्रहालय के सन् १००४ के लेख (क्र० ३०) में महादेवी द्वारा स्थापित मूर्ति का उल्लेख है। कोल्नुपाक के सन् १०३७ के लेख (क्र० ४०) के अनुसार चालुक्य वंश की रानी (नाम अस्पष्ट) ने वहाँ के मन्दिर को भूमिदान दिया था। देवगढ़ के सन् १०७० के लेख (क्र० ४३) में मोहिनी द्वारा स्थापित पद्मावती मूर्ति का उल्लेख है। इंगलगी के सन् १०९४ के लेख (क्र० ५८) में चालुक्य रानी जाकलदेवी द्वारा वहाँ के मन्दिर को दिये गये दान का वर्णन है। नाडूल के सन् ११५३ के लेख (क्र० १०१) में सरस्वती मूर्ति की स्थापिका के रूप में वीणा का नाम लिया है। हुरहुरखुर्द के सन् ११७२ के लेखों (क्र० १०५-६) के अनुसार सूहवा ने वहाँ के मन्दिर में स्तम्भों का निर्माण कराया था। अरिकुंड के १२वीं सदी के लेख (क्र० ११८) में पद्मिनीगौडि और कुप्पीगौडि द्वारा व्रत-उद्यापन के समय मूर्ति स्थापना का वर्णन है। इसी समय के पेड्डतुंबलम् के लेख (क्र० १३०) में वीचिकव्वे द्वारा स्थापित पार्श्वमूर्ति का वर्णन है। कल्लगेरि के १३वीं सदी के (क्र० १३४) में मायक्क नामक श्राविका के समाधिमरण का उल्लेख है। हिरेकोनति व हिरेअणजि के लेखों में (क्र० १४२ तथा

१७५) भी दो श्राविकाओं के समाधिमरण का उल्लेख है, इन का समय तेरहवीं सदी है। स्तवनिधि के सन् १४०० के लेख (क्र० १८३) में वहाँ के मन्दिर का निर्माण ललियादेवी द्वारा हुआ ऐसा कहा गया है। सोनागिरि के सन् १७९९ के लेख (क्र० २८१) में वसुमती द्वारा चौबीस तीर्थकरों के चरणों की स्थापना का वर्णन है। इन के अतिरिक्त अन्य कई लेखों में मूर्ति स्थापक श्रावकों के साथ उन की पत्नी, माता या बहन के नाम प्राप्त होते हैं।

इस संकलन में उल्लिखित आर्यिकाओं के नाम इस प्रकार हैं—देवश्री व ललितश्री (दसवीं सदी, लेख क्र० १९), लवणश्री (ग्यारहवीं सदी, लेख क्र० ४९), मेकुश्री (बारहवीं सदी, लेख क्र० १००), सोना (लेख क्र० ३४५), सिरिमा (लेख क्र० ३५२), पद्मश्री, संजमश्री, रत्नश्री, ललितश्री व जयश्री (लेख क्र० ३५४)।

५. राजाश्रय का विवरण

इस संकलन के लगभग ६० लेखों में भारत के विभिन्न प्रदेशों के राजाओं, सामन्तों या अन्य अधिकारियों के नाम मिलते हैं तथा जैनों के धर्मकार्यों में उन के प्रत्यक्ष या परोक्ष सहयोग का इन लेखों से पता चलता है। इन का विवरण इस प्रकार है।

गुप्त—विदिशा के मूर्तिलेखों (क्र० २) में गुप्त वंश के सम्राट् रामगुप्त के शासनकाल का उल्लेख है, इस वंश के समय के जैन लेखों में यह सब से पुरातन है (पिछले संग्रह में कुमारगुप्त, स्कन्दगुप्त व बुधगुप्त के राज्यकाल के लेख प्राप्त हुए थे)।

सिन्द—बेळ्ळट्टि के दानलेख (क्र० ८) में सिन्द कुल के राज्य में दुर्गराजनिर्मित मन्दिर का उल्लेख है, यह लेख आठवीं सदी का है। (पिछले संग्रह में इस वंश के ग्यारहवीं-बारहवीं सदी के चार लेख हैं)।

राष्ट्रकूट—मेडूर के दानलेख (क्र० ९) में इस वंश के सम्राट् जग-

तुंग (गोविन्द ३) तथा उन के सामन्त सळुकि राजादित्य के शासनकाल का उल्लेख है (पिछले संग्रह में इस वंश के लेख सन् ८०२ से प्राप्त हुए हैं, यह लेख भी नौवीं सदी के प्रारम्भ का है)। वजीरखेड ताम्रपत्र (क्र० १४) में उल्लिखित चन्दनपुरी की अमोघवसति के नाम से अनुमान होता है उस का निर्माण जगत्तुंग के पुत्र अमोघवर्ष के राज्य में हुआ होगा। लोकापुर के लेख (क्र० १३) में अमोघवर्ष के पुत्र कृष्ण २ के सामन्त लोकटे (जिस का अन्यत्र उल्लिखित नामान्तर लोकादित्य है) की प्रशंसा उपलब्ध होती है, इस ने लोकपुर नगर की स्थापना की तथा उसे हरि-हर-जिन-बुद्ध मन्दिरों से विभूषित किया था। कृष्ण के पौत्र व उत्तराधिकारी इन्द्र ३ ने आचार्य वर्धमान को दो मन्दिरों के लिए आठ गाँव दान दिये थे (क्र० १४-१५)। इसी वंश के सामन्त शंकरगंड (जो कृष्ण ३ के अधीन थे) ने कोलनुपाक में मन्दिर बनवाया था (क्र० ४०) (यह बाद में कुलपाक के माणिक स्वामी के नाम से तीर्थक्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध हुआ)।

गंग—इस वंश के राजा मारसिंह ने उस की माता द्वारा निर्मित जिन मन्दिर के लिए सन् ९६२ में एक गाँव दान दिया था (लेख क्र० १७) (पिछले संग्रह में इस वंश के कई लेख हैं जिन में प्राचीनतम पाँचवीं सदी का है)।

परमार—इस वंश के राजा भोजदेव के समय का मूर्तिलेख (क्र० ३२) भोजपुर में मिला है। वहीं का एक अन्य मूर्तिलेख (क्र० ५९) इसी वंश के राजा नरवर्मा के समय का है (पिछले संग्रह में भोजदेव व उदयादित्य के राज्यकाल के दो लेख हैं)।

कल्याण के चालुक्य—इस वंश के सम्राट् त्रैलोक्यमल्ल की रानी ने कोलनुपाक के जिन मन्दिर को सन् १०६७ में भूमिदान दिया था (लेख क्र० ४०)। कुयिबाळ के सन् १०४५ के दानलेख में भी इसी राजा के राज्य का उल्लेख है (क्र० ३६)। सम्राट् भुवनैकमल्ल के शासनकाल के

तीन लेख हैं (क्र० ४१, ४२, ४४)। इन में महामण्डलेश्वर जटाचोळभीम, सामन्त गिरिगोटेमल्ल, सामन्त पंपपेर्मानिडि, वाजिकुल के सामन्त कालिमय्य तथा दण्डनायक नागवर्मा के नाम भी मिलते हैं। दद्दल के सन् १०६९ के लेख (क्र० ४१) के अनुसार वहाँ के जिन मन्दिर को सामन्त गिरिगोटेमल्ल का नाम दिया गया था तथा तडखेल के सन् १०७१ के लेख (क्र० ४४) के अनुसार कालिमय्य व नागवर्मा दण्डनायक ने वहाँ के मन्दिर को दान दिये थे। सम्राट् जगदेकमल्ल के शासनकाल में दण्डनायक पोळलमय्य ने तलेखान के जिनमन्दिर को सन् १०७२ में कुछ दान दिया था (लेख क्र० ४५)। सम्राट् त्रिभुवनमल्ल के शासनकाल के नौ लेख हैं। चितलघाट के सन् १०८१ के लेख (क्र० ५२) के अनुसार इन के महासामन्त कद्दरस ने आचार्य माधवचन्द्र को कुछ दान दिया था। अल्लदुर्गम् के सन् १०८४ के लेख (क्र० ५३) में महामण्डलेश्वर आहवमल्ल पेर्मानिडि द्वारा शान्तिनाथ मन्दिर को दिये गये दान का वर्णन है। कोण्णूर के सन् १०८७के लेख में रट्टवंशीय सामन्त जयकर्ण के अधीन महाप्रभु निधियम के कुछ दान का वर्णन है (लेख क्र० ५४)। पुदूर के सन् १०८७ के लेख (क्र० ५५) के अनुसार महामण्डलेश्वर जत्तरस ने पार्श्वनाथ पूजा के लिए दण्डनायक तिक्कप्प को कुछ भूमि सौंपी थी। यहीं के इसी वर्ष के लेख (क्र० ५६) में महामण्डलेश्वर हल्लवरस द्वारा पल्लवजिनालय को दिये गये दान का वर्णन है। इंगळगी के सन् १०९४ के लेख (क्र० ५८) में सम्राट् की रानी जाकलदेवी के दान व मूर्ति स्थापना का वर्णन है। कोलनुपाक के सन् ११२५ के लेख (क्र० ८१) में राजकुमार सोमेश्वर ने दण्डनायक सायिमय्य की प्रार्थना पर अम्बिकादेवी के मन्दिर को एक ग्राम दान दिया था ऐसा वर्णन है। बोधन और गोब्बूर के लेखों (क्र० ७२ व ८०) में भी त्रिभुवनमल्ल के राज्य का उल्लेख है। इस वंश के अगले सम्राट् भूलोकमल्ल के राज्यकाल में सन् ११३० में गोर्टे में आचार्य त्रिभुवनसेन का समाधि-लेख (क्र० ८२) स्थापित

हुआ था। सम्राट् जगदेकमल्ल के राज्यकाल में सन् ११४८ में हेर्गडे मादिराज व आदित्य नायक ने कुयिवाळ के मन्दिर को दान दिया था (लेख क्र० ९६) (पिछले संग्रह में इस राजवंश के कई लेख हैं जिन में प्राचीनतम सन् ९९० का है)।

कदम्ब—इस वंश के महामण्डलेश्वर मल्लदेव के राज्य में दण्डनायक माचरस ने पार्श्वनाथ मन्दिर को दान दिया था ऐसा गुंडवले के लेख (क्र० ९०) से ज्ञात होता है (इस वंश की मुख्य शाखा के ११ और सामन्तों के १५ लेख पिछले संग्रह में हैं जिन में सब से पुराने पाँचवीं सदी के हैं)।

चोल—उज्जिलि के दानलेख (क्र० १०४) में श्रीवल्लभ चोल महाराज द्वारा इन्द्रसेन आचार्य को दिये गये दान का वर्णन है। यह लेख बारहवीं सदी का है (इस वंश की मुख्य शाखा के २८ लेख पिछले संग्रह में हैं जिन में सब से पुराना लेख सन् ९४५ का है)।

यादव—देवगिरि के यादव राजा कन्नर के राज्यकालमें देशीगण के आचार्यों को सन् १२४८ में कुछ दान मिला था (लेख क्र० १४१)। इसी वंश के राजा रामचन्द्र के समय सन् १२७१ में हिरेकोनति में एक श्राविका का समाधिलेख (क्र० १४२) स्थापित हुआ था। सन् १२८३ का सुतकोटि का समाधिलेख (क्र० १४८) भी रामचन्द्र के राज्यकाल का है। हिरेअणजि के सन् १२९३ के दान लेखों (क्र० १५०-१) में रामचन्द्र के राज्य में महाप्रधान परशुराम के शासनकाल का उल्लेख है। यहीं पर एक श्राविका का समाधिलेख (क्र० १७५) इसी राजा के समय का है (पिछले संग्रह में यादव वंश के २४ लेख हैं जिन में सब से पुराना सन् ११४२ का है)।

खुमाण (गुहिलोत)—चित्तौड़ के एक खण्डित लेख (क्र० ११३) में बारहवीं सदी के खुमाण वंश के राजा जैत्रसिंह का उल्लेख है। यहीं के एक अन्य लेख (क्र० १५३) में आचार्य धर्मचन्द्र का सम्मान करने

वाले जिस वीर हमीर का उल्लेख है वह भी सम्भवतः इस वंश का राजा था (पिछले संग्रह में इस वंश का कोई लेख नहीं मिल सका था)।

चाहमान—हथूंडी के सन् १२८८ के दानलेख (क्र० १४९) में इस वंश के सामन्तसिंह के राज्य का उल्लेख है (पिछले संग्रह में इस वंश की विभिन्न शाखाओं के आठ लेख हैं जिन में सब से पुराना सन् ११३४ का है)।

विजयनगर—दक्षिण के इस साम्राज्य के राजा हरिहर के मन्त्री बैच के पुत्र इरुगप दण्डनायक की प्रशंसा पानुगल्लु के सन् १३९७ के लेख (क्र० १८२) में मिलती है। इरुगप द्वारा एक जिन मन्दिर के निर्माण का वर्णन सन् १४०२ के आनेगोंदि के लेख (क्र० १९२) में है। सन् १५१५ के खंवदकोणे के लेख (क्र० २३२) में सम्राट् कृष्णदेवराय के सामन्त विजयप्प वोडेय द्वारा आचार्य वीरसेन को दिये गये दान का वर्णन है। मंकी के सन् १५१५ के दानलेख (क्र० २३१) में इम्मडि देवराज के शासन का उल्लेख है। केरवसे के सन् १४५० के दानलेख में (क्र० २०१) वीरपाण्ड्यदेव का तथा जलोल्ली के सन् १५४५ के मन्दिर लेख (क्र० २४०) में गेरसोप्पे के कृष्णभूपाल का प्रादेशिक शासक के रूप में उल्लेख है, ये दोनों विजयनगर के सम्राटों के सामन्त थे (पिछले संग्रह में विजयनगर राज्य के कई लेख हैं जिन में सब से पुराना सन् १३५३ का है)।

तोमर—ग्वालियर के तोमर वंश के १५वीं सदी के राजा डूंगरसिंह और कीर्तिसिंह का उल्लेख वहाँ के कई मूर्तिलेखों में है (लेख क्र० १९९, २०२, २०५-६ आदि) (पिछले संग्रह में भी इन के कुछ लेख हैं)।

कूर्म (कछवाह)—इस वंश के राजा रायमल व उन के मन्त्री देव-दास का उल्लेख रेवासा के सन् १६०४ के मन्दिरलेख में (क्र० २५१) मिला है (पिछले संग्रह में कछवाहों की पुरानी शाखाओं के दो लेख सन् ९७७ व १०८८ के हैं)।

चन्द्रावत—रामपुरा के चन्द्रावत राजा अचलदास तथा उस के पौत्र दुर्गभानु का वर्णन वहाँ के सन् १६०७ के लेख (क्र० २५३-४) में है। इन्होंने बघेरवाल जाति के साह जोगा और पाथू (पदारथ) को मन्त्रि-पद पर नियुक्त किया था। दुर्गभानु के पुत्र चन्द्र ने पाथूसाह को मुख्य मन्त्री बनाया था। इन की वीरता व धर्म कार्यों के वर्णन के कारण यह लेख महत्त्वपूर्ण है। इस वंश का यह प्रथम जैन लेख प्रकाशित हुआ है।

मुगल—बादशाह जहाँगीर के राज्य में राणोद में सन् १६१८ में मूर्तिप्रतिष्ठा उत्सव हुआ था (ले० क्र० २५९)। उपर्युक्त चन्द्रावत राजा भी बादशाह अकबर व जहाँगीर के सामन्त थे (पिछले संग्रह में भी मुगल राज्यकाल के कई लेख हैं)।

अन्य राजा व सामन्त—कई लेखों में कुछ अन्य राजाओं व सामन्तों का उल्लेख मिला है जिन के वंश, राज्य या प्रभावक्षेत्र के बारे में निश्चित जानकारी प्राप्त नहीं है। सन् ९२३ के राजोरगढ़ लेख (क्र० १९) में राजा पुलीन्द्र व सावट के नाम उल्लिखित हैं। देवगढ़ के सन् ११५४ के लेख (क्र० ९९) में महासामन्त उदयपाल का नाम अंकित है। यहीं के १२वीं सदी के लेख (क्र० १३१) में राजा नल्लट का नाम प्राप्त होता है। उखलद के दो मूर्तिलेखों (क्र० १३६-७) में सन् १२१५ में राय प्रतापदमन व राय हमीर उल्लिखित हैं। देवगढ़ के अनिश्चित समय के दो लेखों (क्र० ३७० तथा ३७२) में चन्देरी के राजा दुर्जनसिंह तथा महाराजकुमार तेजसिंह का उल्लेख है। ओर्छा के बुन्देल राजा जुगराज सन् १६२४ के सोनागिरि के मूर्तिलेख (क्र० २६५) में उल्लिखित हैं। महाराजकुमार उदितसिंह और उन के अधीन अधिकारी गोपालमणि का सोनागिरि के सन् १६९० के लेख (क्र० २७२) में उल्लेख है। दतिया के राजा छत्रजीत (लेख क्र० २७८ व २८२), शत्रुजीत (लेख क्र० २७६), पारीछत (लेख क्र० २८५-७), विजयबहादुर (लेख क्र० २९६) तथा भवानीसिंह (लेख क्र० ३०४) सोनागिरि के लेखों में उल्लिखित हैं।

६. उपसंहार

अन्त में हम इस संकलन के कुछ विशिष्ट लेखों की उपलब्धियों की ओर विद्वानों का पुनः ध्यान दिलाना चाहते हैं।

(१) पाला के लेख से महाराष्ट्र में जैन साधुओं का अस्तित्व ईसवी सन् पूर्व दूसरी सदी में प्रमाणित हुआ है।

(२) सोनागिरि के लेखों से इस स्थान की प्राचीनता सातवीं सदी तक प्रमाणित हुई है।

(३) वज्रोरखेड ताम्रपत्रों से महाराष्ट्र में द्राविड संघ के अस्तित्व का तथा सम्राट् अमोघवर्ष के नाम पर स्थापित जिनमन्दिर का पता चला है।

(४) द्वारहट के लेख से उत्तरप्रदेश के पर्वतीय जिलों में जैन साध्वियों के विहार का प्रमाण मिला है।

(५) देवगढ के लेखों से इस स्थान की प्राचीनता व लोकप्रियता प्रमाणित हुई है।

(६) कोल्नुपाक (प्रसिद्ध नामान्तर कुल्पाक) के लेखों से इस तीर्थ की प्राचीनता नौवीं सदी तक प्रमाणित हुई है।

(७) आन्ध्र प्रदेश के अनेक लेखों से वहाँ नौवीं से बारहवीं सदी तक जैन समाज की समृद्ध स्थिति का पता चलता है।

(८) चित्तौड़ के लेखों से कीर्तिस्तम्भ के स्थापक साह जीजा के परिवार का विस्तृत परिचय मिला है।

(९) रामपुरा के लेखों से वहाँ के दीवान पाथूशाह के परिवार का विस्तृत परिचय मिला है।

(१०) उखळद के लेखों से महाराष्ट्र में सोलहवीं-सत्रहवीं सदी में कार्यरत जैन भट्टारकों के इतिहास की महत्त्वपूर्ण सामग्री मिली है।

इस संकलन को मिला कर इस शिलालेखसंग्रह में लगभग २४०० लेखों का विवरण प्रकाशित हुआ है। इस सम्बन्ध में अन्त में हम कुछ विचार प्रकट करना चाहते हैं।

अब तक का यह अध्ययन मुख्यतः पराश्रित रहा है—अधिकांश लेख या उन के सारांश पुरातत्त्व विभाग के अधिकारियों तथा अन्य जैनेतर विद्वानों द्वारा पहले प्रकाशित हुए थे। इन की अपनी सीमाएँ हैं अतः यह कार्य मन्द गति से हो पाता है। पिछले दस वर्षों को देखा जाये तो प्रतिवर्ष औसतन ४० लेख ही प्रकाश में आ सके हैं। अतः इस क्षेत्र में कार्य को गति प्रदान करने के लिए आवश्यक है कि जैन विद्वान् और संस्थाएँ स्वयं अन्य अप्रकाशित लेखों के संकलन और प्रकाशन का कार्य हाथ में लें।[१]

जैनेतर विद्वानों ने जिन लेखों का केवल सारांश प्रकाशित किया है उन में राजनीतिक इतिहास की ओर मुख्य ध्यान होने से जैन समाज के इतिहास के लिए उपयोगी बहुतसी बातें अनुल्लिखित रह गयी हैं। ऐसे सभी लेखों के मूल पाठ पूर्ण रूप में संकलित हो कर प्रकाशित होने चाहिए।

हम आशा करते हैं कि इस ग्रन्थमाला के उत्साही संचालक इस दृष्टि से अगले भागों को तैयार कराने का प्रयास करेंगे।

०

१. श्वेताम्बर लेखों के प्रकाशन में श्री पूरणचन्द नाहर, श्री अगरचन्द नाहटा आदि ने जो कार्य किया है वह हमारे लिए मार्गदर्शक हो सकता है।

जैन-शिलालेख-संग्रह

मूल - लेख - विवरण

(समय-क्रमानुसार)

मूल-लेख-विवरण

१

पाला (पूना, महाराष्ट्र)

लिपि—सन्पूर्व दूसरी सदी की, ब्राह्मी-प्राकृत

१ नमो अरहंतानं कातुन

२ द भदंत इंदरखितेन लेनं

३ कारापितं पोढि च सह—

४ सिधं

पूना जिले के पाला गाँव के समीप वन में स्थित एक गुहा में यह चार पंक्तियों का लेख है। इस गुहा की खोज पूना विश्वविद्यालय के श्री० आर० एल० भिडे ने की। लेख की पहली पंक्ति में पंचनमस्कारमंत्र की पहली पंक्ति अंकित है। अन्य पंक्तियों में कातुनद (जो संभवतः किसी स्थान का नाम है) के भदंत (आदरणीय) इंदरखित (इन्द्ररक्षित) द्वारा लेन (गुहा) और पोढि (जलकुण्ड) बनवाये जाने का उल्लेख है। लिपि का स्वरूप देखते हुए यह लेख सन्पूर्व दूसरी सदी का प्रतीत होता है। यह महाराष्ट्र में प्राप्त जैन धर्म संबंधी लेखों में सब से पुरातन है। उपर्युक्त विवरण धर्मयुग साप्ताहिक, बम्बई के १५ दिसम्बर १९६८ के अंक में डा० हंसमुख धीरजलाल सांकलिया के लेख में दिया है। वहीं प्रकाशित लेख के चित्र से ऊपर लेख का पाठ दिया है।

२

मुत्तुप्पट्टि (मदुरै, मद्रास)

लिपि—सनपूर्व पहली सदी की, तमिल-ब्राह्मी

इस ग्राम के समीप की पहाड़ी पर जिनमूर्तियुक्त गुहा के बाजू में यह लेख है—

नार्प ऊर् (चे) (य) (चे आ) चा (शा) न्

यह संभवतः गुहा निर्माता का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६३-६४, शि० क्र० बी २४३

३

विदिशा (मध्यप्रदेश)

चौथी सदी (सन् ३७५ के लगभग), ब्राह्मी-संस्कृत

विदिशा नगर के समीप वेस नदी के तट पर एक टीले की खुदाई में तीन तीर्थंकर-मूर्तियाँ मिलीं जो श्री राजमल मडवैया के प्रयत्न से सुरक्षित रूप से विदिशा के शासकीय संग्रहालय में रखी गयी हैं। इन के पादपीठों पर लेख हैं। एक लेख पूर्णतः नष्ट हुआ है, दूसरा आधा टूटा है और तीसरा पूर्ण है। एक मूर्ति पर तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का और एक पर तीर्थंकर पुष्पदन्त का नाम अंकित है। इन की चरण चौकियों पर सिंह अंकित हैं। सिर के पीछे प्रभामण्डल है। शिल्प विन्यास की शैली कुषाण काल और उत्तर-गुप्त काल के बीच की है। लेखों के अनुसार मूर्तियों का निर्माण महाराजाधिराज श्री रामगुप्त के शासनकाल में (सन् ३७५ के लगभग) हुआ था। उपरिलिखित विवरण दैनिक नई दुनिया, जबलपुर के २२-२-६९ के अंक में प्रकाशित डॉ० कृष्णदत्त वाजपेयी के लेख में दिया गया है।

४

शिंगवरम् (दक्षिण अर्काट, मद्रास)

लिपि—सातवीं सदी की, तमिल

इस ग्राम के निकट तिरुनाथर् कुण्रु नामक चट्टान पर यह लेख है। इस में ५७ दिन के उपवास के बाद चन्द्रनंदि आगिरिगर् के दिवंगत होने का वर्णन है।

(मूल तमिल में मुद्रित)　　　　मा० इ० इ० १७ पृ० १०४

५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

लिपि—सातवीं सदी की, संस्कृत-नागरी

यहाँ की पहाड़ी के मंदिर नं० ७६ में रखी हुई प्रतिमा के पादपीठ पर यह लेख है। इस में स्थापना कर्ता का नाम सिंघदेवपुत्र वडाक बताया है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ३८१

६

ऐहोळे (बीजापुर, मैसूर)

लिपि—७वीं सदी की, कन्नड (?)

यहाँ के जिन मंदिर के पाषाणों पर निम्नलिखित नाम अंकित है (ये संभवतः यात्रियों के है)–

श्रीविण अम्मन्

श्रीआनंद स्थविर शिष्य

श्रीपिण्टवादि महेन्द्रर्

श्रीविसादन्

श्रीम (वा) ग्यमत्तन्

श्रीमौरेय

श्रीविंज (डि) ओवजन्

श्रीगुणप्रियन् (प) त्त श्रीचित्राधिपश्री

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी २१२ से २१८

७

बेळट्टि (सांगली, महाराष्ट्र)

लिपि—आठवीं सदी की, कन्नड

मुळगुंद में सिन्द राजा राज्य कर रहे थे उस समय दुर्गराज द्वारा निर्मित जिनमंदिर को श्रीभाग्य ने ५० मत्तर जमीन दान दी ऐसा इस लेख में वर्णन है ।

क० रि० इ० १९४१-४२, शि० क्र० ४०

८

सित्तण्णवाशल (तिरुचिरपल्ली, मद्रास)

लिपि—आठवीं सदी की, तमिल

पहाड़ी में खुदे हुए जैन मंदिर के इर्द गिर्द तथा मंदिर के स्तम्भों पर ये आठ लेख हैं । इन में निम्नलिखित शब्द हैं (ये सम्भवतः यात्रियों के नाम हैं)—

श्रीयंकल

श्रीतिरुवाशिरियन्

श्रीकोकादित्तन्
तिरुक्को
श्रीपिरुतिवि (न) च्चन्
श्रीतिरुवि (र) म (न्)
श्रीकायवन्
वितिवळि ग्रुणक्कुळम्

रि० इ० ए० १९६०-६१, प्रस्तावना पृ० १९ शि० क्र० बी ३२४ से ३३१

९

मेट्टूर (धारवाड, मैसूर)

नौवीं शताब्दी का प्रारम्भ, कन्नड

राष्ट्रकूट सम्राट् प्रभूतवर्ष जगत्तुंग (गोविन्द तृतीय) के अधीन बन-वासि १२००० प्रदेश के शासक सळुकि वंश के राजादित्यरस द्वारा मल्लवे की बसदि (जिनमंदिर) के लिए मौनिगुरु के किसी शिष्य को कुछ भूमि दान दी गयी ऐसा इस लेख में वर्णन है। लेख किरुगुड्ड द्वारा उत्कीर्ण किया गया था।

रि० इ० ए० १९५८-५९, शि० क्र० बी ५८२

यह लेख प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑफ् दि कन्नड रिसर्च इन्स्टीट्यूट (१९५२-५७) में (पृ० ७०-७१ कन्नड) में पूर्ण रूप में छपा है।

१०-११-१२

एलोरा (औरंगाबाद, महाराष्ट्र)

लिपि—९वीं या १०वीं सदी की, संस्कृत-कन्नड

गुहा नं० ३३ जगन्नाथसभा में ये तीन लेख अंकित हैं। एक में नागनंदि का नाम है। दूसरे में किसी बालब्रह्मचारी द्वारा पद्मावती की

मूर्ति की स्थापना का उल्लेख है। तीसरे में नागनंदि, (दो) पद्मनंदि सिद्धांत भट्टारक तथा शीलवे, आळुक एवं आचबे के नाम मिलते हैं।

रि० इ० ए० १९५८-५९, शि० क्र० बी १५६, १५८-९

१३

लोकापुर (बेळगाँव, मैसूर)

९वीं शताब्दी, कन्नड

इस लेख में राजा कृष्ण के साले के रूप में लोकटे नामक सामन्त का वर्णन है। यह तैलकब्बे का पुत्र था। धोर, दोण्ड तथा वंक इस के बन्धु थे। बनवासि १२००० प्रदेश पर शासन करते हुए इस ने लोकपुर नगर बसाया तथा उसे हरि, हर, जिन और बुद्ध के मंदिरों से सुशोभित किया। इस ने लोकसमुद्र तालाब भी खुदवाया।

क० रि० इ० १९४२-४३, शि० क्र० ३१

१४

वजीरखेड ताम्रपत्र (प्रथम) (नासिक, महाराष्ट्र)

शकवर्ष ८३६ = सन् ९१५, नागरी-संस्कृत

प्रथम पत्र

१ (स्वस्ति चिह्न) श्रियः पदन्नित्यमशेषगोव(च)रत्नयप्रमाणप्रतिषिद्ध-
दुष्पथम् [।] जनस्य सव्यत्वसमाहितात्मनो जयत्यनुग्राहि जि-

२ नेन्द्रशासनम् ।। [१] श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलान्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ।। [२] अ-

३ स्त्यद्यापि निशामुखैकतिलको राजेति नामोज्वलम्
वि (वि) भ्राणो मृदुभिः करैर्जगदिदं यो राजते रञ्जयन् [।] यस्यै-

४ कापि कला कलङ्करहिता गङ्गेव तुङ्गे जटाजूटे धूर्जटिना धृतामृतमयी सोमः स किं वर्ण्यते ॥ [३] वंशे तस्य पुरू-

५ रवःप्रभृतिभिर्भूपैः कृतालंकृतावन्तःसारतयोन्नतिं गतवति प्राप्ते च वृद्धिं क्रमात् [।] तुङ्गानामपि भूभृतामु-

६ परिगे जातो यदुर्भूपतिः यः कृत्वा कुलमात्मनामविदितं पूर्वान् विजिग्ये नृपान् [॥४] तस्मिन् विस्मयकारिचारुचरि-

७ ते तस्यान्वये संभवम् मत्वा श्लाघ्यतमं पितामहमुखैरभ्यर्थितो नाकिभिः [।] कल्पान्तेपि निजोदरान्तरदरीविश्रा-

८ न्तसप्तार्णवश्चक्रे जन्म हरिर्जितामररिपुः साक्षात् स्वयं श्रीपतिः ॥ [५] इत्थं हरेः प्रसरति प्रथि

९ ते पृथिव्यामव्याकुलं वरकुले कलितप्रतापः [।] निर्मूलिताहित-महीपतिभूरिदुर्गः पृथ्वीपतिः

१० पृथुसमोजनि दन्तिदुर्गः। [।६] जेतुं तस्मिन् प्रयाते त्रिदिवमिव ततः कृष्णराजो नरेन्द्रः तस्यैवा-

११ सीत् पितृव्यः समजनि तनयस्तस्य गोविन्दराजो [।] राजा तस्यानु-जोभून्निरुपमनृपतिः श्रीजगत्तुङ्गदेवः ॥

१२ सूनुस्तस्यावनीशो भवदवनिपतिस्तत्सुतोमोघवर्षः [॥७] तस्मा-दिन्दुकरावदातयशसश्चालुक्यकालानलात् ले-

१३ भे जन्म हिमांशुवंशतिलकः श्रीकृष्णराजो नृपः ॥ राज्ञी तस्य च चेदिराजतनया चछत्रत्रयाधीश्वरा जाता भूमि-

१४ पतेर्व्व (र्व) भूव च जगत्तुङ्गस्तयोरात्मजः ॥ [८] यस्याद्यापि प्रचण्डासिघातविश्लिष्टविग्रहाः [।] हतशेषा विमुंचन्ति गूर्ज-|

१५ रा न भयज्वरम् ॥०॥ (९॥) आसीद्वा (बा)हुसहस्रसेतुविहतव्या-वृत्तरेवाजलः क्षोणीशो दशकण्ठदर्प्पदलनः ख्यातः

१६ सहस्रार्जुनः ।। वंशे तत्र च हैहयैकतिलकश्चेदीश्वरः कोक्कलो जात-
स्तस्य सुतश्च शंकरगणः शंकाकरो विद्विषां [।।१०]

१७ चालुक्यान्वयमण्डनस्य नृपतेः श्रीसिंहुकस्यात्मजो राजासीदरयम्म
इत्यनुपमस्तस्यात्मजायामभूत् ।।

द्वितीय पत्र : पहली ओर

१८ लक्ष्मीः क्षीरमहार्णवादिव सुता लक्ष्मीस्ततः शंकुकात् देवी सा च
पराक्रमोर्जितजगत्तुङ्गस्य कान्ताभवत् ।। [११] तस्या-

१९ स्तस्मात् तनूजो मदन इव हरे[ः] स्कन्दवच्चन्द्रमौलेरिन्दुः
क्षीराम्बुराशेरिव विमलयशोराशिशुक्लीकृताशः [।] धातुः सौ-

२० न्दर्यसृष्टिव्यतिकरजनितानूनविज्ञानसेतुः पृथ्व्याः पुण्यातिरेकैः सुकृत-
निधिरभूदिन्द्रराजो नरेन्द्रः ।। [१२] वे-

२१ धा विज्ञानदर्प्पं विबु (बु) धपतिरपि स्वाधिपत्यैकदर्प्पं , भूभाराधार-
दर्प्पं फणिपतिरधिकं शत्रवः शौर्यदर्प्पङ्क-

२२ दर्पो रूपदर्प्पं भुवि सममसुचं यं विलक्षाः समक्षं दृष्ट्वा दृष्टान्त-
कल्पं सकलगुणगणस्यैकमेवावनीशम् ।। [१३]

२३ न सर्वगुणसन्दोहमेकस्थं कुरुते विधिः [।] यन्निर्मायेति निर्मृष्टस्तेन
दोषश्चिरादयम् ।। [१४] समर्प्पितकराम्भोधि-

२४ वेलामालावलम्बि (म्बि) नी । यश्चिरस्तान्यभूपाला स्वयं वृतवती
मही ।। [१५] तेजो वीक्षितुमक्षमाः क्षणमपि स्वैरे-

२५ व दोषैर्मुहुर्भ्रान्ताः सन्ततमक्रमेण सहसा संगम्य सर्वेप्यमी । व्यालो-
लाश्चलपक्षपातवि-

२६ कला दीपप्रतापानले दायादाः स्वयमेव यस्य पतिता दीपे पतंगा
इव ।। [१६] आक्रान्तं सम-

२७ मेव शत्रुशिरसा येन स्वसिंहासनम् भू (भ्रू) भंगेन सहैव भंगम-
परे नीताः परं विद्विपः [।] तेषां-

२८ राज्यमपि क्षणाच्चलमनोराज्यावशेपं (षं) कृतं राज्ये कल्पलतेव
कामफलदा यस्याभवन्मेदिनी ॥ [१७] भूभारोद्व-

२९ हने जितः फणिपतिः शक्रः श्रिया निर्जितः कीर्त्तिः क्रान्तदिगन्तरा
मलिनिता येनाखिलक्ष्माभृताम् [।] त्रैलो-

३० क्येपि न विद्यतेस्य सदृशो राजेति यस्योच्चकैराभाति प्रकटीकृतं
यश इव श्वेतातपत्रत्रयम् ॥ [१८] निर्भिन्नं नर-

३१ सिंहतां गतवता वक्षोमुना विद्विषाम् देवोयं विततस्वचक्रदलिताराति-
श्रियाप्याश्रितः [।] तत्सेवेहममुं ध्वजा-

३२ प्रनिलयो राजानमित्याश्रितो रागादंचितकांचनोज्वलतनुर्य्यं वैनतेय
[:] स्वयम् ॥ [१९] दानं मद्गजः सृजन्न-

३३ पि रुषा कृष्णं करोत्याननं सद्वृक्षोपि फलप्रदः स्वसमये वर्षन् घनो
गर्जति [।] न क्रोधोद्वहनं न कालह-

द्वितीय पत्र : दूसरी ओर

३४ रणं नोत्सेकतो गर्जितं दानं यस्य तथाप्यनूनमभवद्राज्याभिपे-
कोत्सवे ॥ [२०] देवो दानितथा स निर्जितव (ब) लिः-

३५ श्रीकीर्त्तिनारायणः जित्वा वारिधिमेखलां वसुमतीमेकाधिपः पालयन्
देवब्रा (ब्रा) ह्मणभोगजातम-

३६ खिलं कृत्रा (त्वा) नमस्य (स्यं) फलं सर्वेषामपि भूभुजां स्वयम-
भूद्देवो नमस्यश्चिरम् ॥ [२१] यश्च विनयविनतानेक-

३७ भूपालमौलिमालालालितचरणारविन्दयुगलः सौन्दर्यशौर्यचातुर्यौदा-
र्यधैर्यगाम्भीर्यवीर्यादि-

३८ मिरखिलजनाश्चर्यकारिभिरहितव(ब)हुनृपैश्वर्यहारिभिर्म्महागुणैरुपार्जितानवद्यविद्योतमानविवि-

३९ धनामधेय[:] स्वराज्यलीलाविनिर्जितशतमखः श्रीगेयचतुर्मुखः गोदानभूमिदानकनकदानाद्यनेकानूनदा-

४० नपरायणः श्रीकीर्तिनारायणः संत्रासितोद्वृत्तशत्रुवरपुरोल्लासितसितातपत्रः श्रीमनुजत्रिनेत्रः। स्वकी-

४१ योदयविकासिताशेषविनतजनवदनपुण्डरीकषण्डः श्रीराजमार्तण्डः समुत्खातसु-

४२ भगमानिनीमहाभिमानसौभाग्यदर्प्पः श्रीरट्टकन्दर्प्पः पराक्रमाक्रान्तसमस्तपार्थिवो-

४३ त्तुङ्गः श्रीविक्रमतुङ्गः समभवत(त्) [॥] स च परमभट्टारकमहाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीमदकालवर्ष-

४४ देवपादानुध्यो (ध्या)तपरमभट्टारकमहाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीमन्नि-त्यवर्षदेवपृथ्वीवल्लभः श्रीवल्लभनरेन्द्रदेवः

४५ कुशली सर्व्वानेव यथा संव (ब) ध्यमानकां(कान्) राष्ट्रपतिविषयपतिग्रामकूटयुक्तकनियुक्तकाधिकारिकमहत्तरादीं (दीन्) स-

४६ मादिशत्यस्तु वः संविदितं यथा मान्यखेटराजधानीस्थिरतरावस्थानेन पट्टव(ब)न्धोत्सवसंपादनाय समा-

४७ नन्दितकुरुन्दकमुपागतेन मया राज्याभिषेकसमये मातापित्रोरात्मनश्चैहिकामुत्रिकपुण्ययशोभि-

४८ वृद्धये पूर्व्वलुप्तानपि देवभोगाग्रहारान् पालयता तथापराण्यप्येकविंशतिलक्षद्रव्योत्पत्तिसहितानि दे-

४९ वभोगग्रामाणां षट्छतानि पंचाशद्ग्रामाधिकानि नमस्यानि प्रयच्छता शकनृपकालातीतसंवत्सरशतेष्व-

५० ष्टासु षट्त्रिंशदुत्तरेषु युवसंवत्सरा-

तीसरा पत्र

५१ न्तर्गतफाल्गुनशुद्धसप्तम्यां शुक्रवारे मृगशिरसि नक्षत्रे प्रभूतोज्वल-
कनकराशिपरिपूरितं तुलापुरुष-

५२ मारुह्य तस्मादनुत्तरता प्रथमोदकातिसर्गेण व (ब)लिचरुसत्त्रतपो-
धनसंतर्प्पणार्थं देवगुरुपूजार्थं ख-

५३ ण्डस्फुटितसंपादनार्थं च चन्दनापुरिपत्तनाभ्यन्तरे अमोघवसतये
सोद्रङ्गौ सपरिकरौ सभूतोपात्त-

५४ प्रत्ययौ सधान्यहिरण्यादेयौ दशदोषदण्डापराधसहितौ अचाटभट-
प्रवेशौ सर्व्वराजकीयानामहस्त-

५५ प्रक्षेपणीयौ समस्तोत्पत्तिसहितो (ता)वाचन्द्रार्कार्ण्णवसरित्पर्व्वत-
समकालीनौ द्वौ ग्रामौ नमस्यौ दत्तौ ॥

५६ तत्र तावत्प्रथमः पाडलावद्दचतुरा (र) श्री (शी) त्यन्तर्गतमालदह-
ग्रामः तस्मात्पूर्व्वः [चिं] चवल्लीग्रामः दक्षिणा गिरि-

५७ पर्ण्णा नदी। पश्चिमा स (सा) एव गिरिपर्ण्णा नदी। उत्तरः
माहुलिग्रामः ॥ तथा द्वितीयः सीहपुरसमीपे पारि-

५८ यालग्रामः ॥ तस्मात्पूर्व्वः निम्व (म्ब) ग्रामः दक्षिणः जन्नपिप्पल-
ग्रामः पश्चिमा मणियाडा-

५९ नाम नदी। उत्तरः महावल्लिनामग्रामः [॥] एवं यथावस्थि (स्थि)
तचतुराघाटोपलक्षितग्राम-

६० द्वयसहिता पूर्व्वमर्यादया भुक्तभुज्यमाना यथावस्थितचतुराघाटो-
पलक्षिता

६१ सा वसतिर्द्रविडसंघविशेषवीरगणचो(वो)र्न्नायान्वयलोकभद्र - शिष्याय वर्द्धमानगुरवे समर्पिता ॥

६२ अयं चास्मद्धर्म्मदायः समागामिभिर्नृपतिभिरस्मद्वंश्यैरन्यैश्चानु- मन्तव्यः ॥ यश्चाज्ञानतिमिरपटला-

६३ वृतमतिराच्छिन्द्या (द्या) दाच्छिद्यमानं वा कदाचिदनुमोदते स पंचभिर्महापातकैरुपपातकैश्च लिप्यते ॥ उ-

६४ क्तं च भगवता वेदव्यासेन ॥ षष्टिं वर्षसहस्राणि स्वर्गे वसति भूमिदः [।] आच्छेत्ता चानुमन्ता च तान्येव नर-

६५ के वसेत् ॥ [२२] स्वदत्तां परदत्तां वा यत्नाद्रक्ष्य (क्ष) नराधिप । महोम्महीमतां श्रेष्ठ दानाच्छ्रेयोनुपालनम् ॥ [२३] सामा-

६६ न्योयं धर्म्मसेतुर्न्नृपाणां काले काले पालनीयो भवद्भिः [।] सर्व्वा- नेतां (तान्) भाविन[ः] पार्थिवेन्द्रां (न्द्रान्) भूयो भूयो याचते

६७ रामभद्रः ॥ [२४] राजशेखरकृता प्रशस्तिरियम् ॥०॥श्री॥

उपर्युक्त ताम्रपत्र वजीरखेड के किसान श्री० नारायणराव मोतीराम माली को खेत जोतते समय मिले थे। इन का प्रकाशन डॉ० वि० भि० कोलते द्वारा सन्मति मासिक (बाहुबली, कोल्हापुर) के नवम्बर-दिसम्बर १९६७ के अंक में किया गया है।[1] उन के द्वारा दिया गया विवरण इस प्रकार है—१४" × १५" आकार के ये तीन पत्र ३ इंच व्यास की गोल सलाई से एकत्रित रखे गये थे। सलाई के ऊपर मुद्रा में कमलासन पर गरुड पंख फैलाये हुए तथा पंजों में सर्प लिये हुए अंकित हैं, गरुड के ऊपर दाहिनी ओर गणपति तथा बायीं ओर दुर्गा की आकृतियाँ है। गणपति के नीचे चामर व दीप तथा दुर्गा के नीचे चामर व स्वस्तिक अंकित है।

१. इन ताम्रपत्रों पर एक लेख डॉ० ज्योतिप्रसाद जैन, लखनऊ, ने जैन सन्देश (शोधांक २४) में प्रकाशित किया है।

गरुड के सिर पर सूर्य व चन्द्र के प्रतीक दो गोल हैं। गरुड के नीचे श्रीमन्नित्यवर्षदेवस्य यह शब्द अंकित है। नित्यवर्ष दानदाता सम्राट् इन्द्रराज (तृतीय) का उपनाम था। लेख के प्रारम्भ में दन्तिदुर्ग, कृष्णराज, गोविन्दराज, निरुपम (जो अन्यत्र ध्रुवराज के नाम से प्रसिद्ध है), जगत्तुङ्ग (गोविन्द तृतीय के नाम से अन्यत्र उल्लिखित), अमोघवर्ष तथा कृष्णराज, इन राष्ट्रकूट राजाओं का संक्षिप्त उल्लेख है। कृष्णराज (द्वितीय) की पत्नी चेदि कुल की राजकन्या थी। इन दोनों के पुत्र जगत्तुङ्ग हुए जिन की पत्नी लक्ष्मी हैहय कुल के राजा कोक्कल के पुत्र शंकरगण की कन्या थी। लक्ष्मी की माता चालुक्य कुल के सिंहुक राजा के पुत्र अरयम्म की कन्या थी (वेमुलवाड के चालुक्य राजा नरसिंह व अरिकेसरी के ही ये नामान्तर प्रतीत होते हैं)। जगत्तुङ्ग व लक्ष्मी के पुत्र इन्द्र (तृतीय) हुए जो कृष्णराज के बाद राष्ट्रकूट साम्राज्य के स्वामी हुए (क्यों कि जगत्तुङ्ग कृष्णराज के पहले ही दिवंगत हुए थे)। इन्होंने राज्याभिषेक के बाद पट्टबन्ध उत्सव के लिए कुरुन्दक (कोल्हापुर जिले का कुरुन्दवाड अथवा परभणी जिले का कुरुन्दा) नगर में जा कर सुवर्णतुलादान के साथ इक्कीस लाख द्रम्म आय वाले ६५० ग्राम दान दिये। इस समारोह की तिथि फाल्गुन शु० ७, शुक्रवार, मृगशिर नक्षत्र, शक ८३६, युव संवत्सर (२४ फरवरी सन् ९१५) इस प्रकार बतायी है। प्रस्तुत ताम्रपत्र के अनुसार द्रविड संघ के विशेष वीरगण के वीर्णय्य अन्वय के लोकभद्र के शिष्य वर्धमान गुरु को चन्दनापुरी पत्तन (वर्तमान चन्दनपुरी, जि० नासिक) की अमोघवसति के लिए दो ग्राम दान मिले थे—पाडलावद्द ८४ विभाग का मालदह (वर्तमान मालधे जि० नासिक) तथा सीहपुर के पास का पारियाल (वर्तमान पारळ, जि० औरंगाबाद)। अमोघवसति का निर्माण सम्भवतः सम्राट् अमोघवर्ष की प्रेरणा से हुआ था। इस प्रशस्ति के लेखक का नाम अन्त मे राजशेखर बताया है जो सम्भवतः कर्पूरमंजरी आदि के रचयिता राजशेखर ही थे।

१५

वजीरखेड ताम्रपत्र (द्वितीय) (जि० नासिक, महाराष्ट्र)

शक ८३६ = सन् ९१५, नागरी-संस्कृत

इन ताम्रपत्रों के पहले दो पत्रों में वही पाठ है जो इस के पूर्व के लेख में पंक्ति ५२ तक दिया है, यहाँ वह सब पाठ ५१ पंक्तियों में पूरा हो गया है। आगे जो भिन्न पाठ है वह इस प्रकार है—

तीसरा पत्र :

५२ वडनेरपत्तने उरिअम्मवसतये सोद्रङ्गाः सपरिकराः सभूतोपात्तप्रत्ययाः सधान्यहिरण्यादेयाः दशदोष-

५३ दण्डापराधसहिताः सर्व्वराजकीयानामहस्तप्रक्षेपणीयाः समस्तोत्पत्ति-सहिता आचन्द्रार्कार्ण्णवसरित्पर्व्वत-

५४ समकालीनाः षट् ग्रामा नमस्या दत्ताः ॥ तत्र तावत्प्रथमः रंकाण-चतुर्विङ्श (विंश) त्यन्तर्गतरुद्राणग्रामः तस्मात्पूर्व्वः रुद्रगि-

५५ रिपादः दक्षिणः स एव रुद्रगिरिः पश्चिमः वारिवाहलाग्रामः उत्तरा मोसिनी नदी ॥ तथा द्वितीयः छट्टियानद्वात्रिं-

५६ शान्तर्गतवन्नउरग्रामः तस्मात् पूर्वः अन्तरवल्ली ग्रामः दक्षिणा गिरिपर्ण्णा नदी । पश्चिमः फेंचग्रामः उत्तरः तल-

५७ वाडग्रामः ॥ तथा तृतीयः रंकाणचतुर्विंशत्यन्तर्गततुंगोणीग्रामः ॥ तस्मात् पूर्व्वः दशमोइयलि ग्रामः दक्षिणा

५८ तुंगभद्रा नदी । पश्चिमः साविणवाडग्रामः उत्तरः कतरवल्लि-ग्रामः ॥ तथा चतुर्थः वटनगरविषयान्तर्गत-

५९ अजलोणी ग्रामः । तस्मात् पूर्व्वः नीलग्रामः दक्षिणः तलवाडग्रामः पश्चिमः डोङ्गरग्रामः-

६० उत्तरा मोसिनी नदी ॥ तथा पंचमः रुद्दाणद्वादशान्तर्गतचंदुहाणग्रामः तस्मात् पूर्व्वः अग्ग-

६१ वलियाणग्रामः दक्षिणा अमियारा नदी । पश्चिमः कन्हैनाणग्रामः उत्तरः वट्टारग्रामः ॥

६२ तथा षष्ठः उद्वलउलचतुर्व्विशत्यन्तर्गतदिवारग्रामः ॥ तस्मात् पूर्व्वः पिप्पलवद्दग्रामः दक्षिणः सीहग्रा-

६३ मः पस्चि [श्चि] मः वडालीखन्ना उत्तरतः मोराग्रामः ॥ एवं यवा [था] वस्थितचतुरावाटोपलक्षितग्रामषट्कसहिता

६४ पूर्व्वमर्यादया भुक्तभुज्यमाना यथात्रस्थितचतुरावाटोपलक्षिता सा वसतिर्द्रविडसंघविशेषवीर-

६५ गणवोर्णाय्यान्वयपर्यङ्कशिष्याय वर्द्धमानगुरवे समर्पिता ॥ अयं चास्मद्धर्म्मदायः समागामिभिर्नृपति-

६६ तिभिरस्मद्व [द्वं] स्यै [श्यै] रन्यैश्चानुमन्तव्यः ॥ यश्चाज्ञानतिमिर-पटलावृतमतिराच्छिन्द्याच्छिद्यमानं वा कदा-

६७ चिदनुमा [मो] दते स पंचभिर्म्महापातकैरुपपातकैश्च लिप्यते ॥ उक्तं च भगवता व्यासेन । षष्टिं वर्षसहस्रा-

६८ णि स्वर्गे वसति भूमिदः [।] आच्छेत्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेत् ॥ [२२] अत्रैव रामश्लोकार्थं ॥ राजशेखरक[कृ]ता प्रशस्तिरियं ॥

इन ताम्रपत्रों में दानदाता इन्द्रराज (तृतीय) की प्रशस्ति पूर्वोल्लिखित प्रथम ताम्रपत्र के अनुसार ही है । द्रविडसंघ-विशेष वीरगण-वीर्णय्य अन्वय के वर्धमान गुरु—जिन्हें ये ताम्रपत्र दिये गये थे वे—भी संभवतः पूर्वोक्त लेख में वर्णित वर्धमान गुरु ही है यद्यपि यहाँ उन के गुरु का नाम नहीं दिया है। इन्हें रुद्दाण (वर्तमान उत्राण जि० नासिक), धन्नउर (वर्तमान धानरी जि० नासिक), तुंगोणी (वर्तमान तुंगण जि० नासिक),

अज्जलोणी (वर्तमान स्थान अज्ञात), चंदुहाण (वर्तमान चौंधाणे जि० नासिक), तथा दिवार (वर्तमान देवरगांव जि० नासिक) ये छह गांव वडनेर (नासिक ज़िले में यह ग्राम इसी नाम से अभी भी है) की उरिअम्मवसति के लिए दान दिये गये थे। दानतिथि तथा अन्य सब विवरण पूर्वोल्लिखित प्रथम ताम्रपत्रों के अनुसार ही समझना चाहिए।

१६

राजौरगढ़ (अलवर, राजस्थान)

सं० ९७९ = सन् ९२३, संस्कृत-नागरी

प्रसिद्ध शिल्पकार सर्वदेव द्वारा राज्यपुर में शांतिनाथ मंदिर के निर्माण का इस में वर्णन है। वह पूर्णतल्लक से निकले हुए धर्कट वंश के देद्दुलक का पुत्र तथा आर्भट का पौत्र था। सर्वदेव ने यह कार्य पुलीन्द्र राजा के आग्रह से किया था। राजा सावट का भी उल्लेख है। सर्वदेव का पुत्र वरांग था तथा गुरु आचार्य सूरसेन थे। इस प्रशस्ति की रचना सागरनंदि और लोकदेव ने की थी।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० बी १२८

१७

कादलूर (मांडया, मैसूर)

शक ८८४ = सन् ९६२, संस्कृत-कन्नड

चालुक्यान्वयसिंहवर्म्मनृपतेः पुत्री मता श्रीमती
कल्लब्बा जयदुत्तरंगनृपतेर्देवी महात्युत्तमा।
तत्पुत्रोजनि मारसिंहनृपतिः श्रीसत्यवाक्याधिपः
ख्यातः श्रीमरुळस्थिरक्षितिभुजस्तस्यानुजः सांजसं ॥२॥

विद्विट्क्षत्रियकुंभिकुंभदळनप्रोद्भूतमुक्ताफळ-
श्रीहारप्रविशोभितामळजयश्रीलक्ष्यवक्षस्थळः ।
कन्नानम्रसुरेश्वरस्तुतिवचश्रीमज्जिनेन्द्रक्रम-
श्रीपद्मद्वयमानसो विजयते श्रीगंगचूडामणिः ॥२४॥

दुर्वृत्तक्षत्रपुत्रद्विरदमदमरभ्रंशवालद्विपारिः
क्ष्माचक्राक्रान्तिमाद्यत्कळिकलिलतमोभेदवाळांशुमाली ।
कैर्नस्तुत्योदयश्रीः प्रतिदिनभुवनानन्दसंवृद्धिवाळ-
श्वेतांशुर्वाळ एव क्षितितळजयिनामग्रणीर्मारसिंहः ॥२५॥

पादांभोरुहभृंगभृत्यमरणव्यापारचिंतामणिः
संत्रासग्रहविह्वलीकृतरिपुक्ष्मापालरक्षामणिः ।
विद्वत्कण्ठविभूषणीकृतगुणप्रोद्भासिमुक्तामणिः
देवः कस्य न वर्णनीयचरितः श्रीगंगचूडामणिः ॥२६॥

स तु सत्यवाक्यकोंगुणिवर्मवर्ममहाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीमान् मारसिंहदेवः

शैलेन्द्रादिव जाह्नवी जलधरात्सौदामिनीवाम्बुधेः
मुक्तापंक्तिरिव प्रकाशितगुणश्रीमूलसंघान्वयात् ।
दिव्या भासुरवृत्तिरप्रविहता प्रादुर्बभूवावनौ
सूरस्ता गणवृत्तिरुज्वळधियां दिग्वाससां जन्मभूः ॥२७॥

श्रीप्रभाचंद्रयोगीशस्तद्गणाधीश्वरः कृती ।
सर्वशास्त्रमहांभोधिर्विश्रुतः सकलावनौ ॥२८॥

तस्य प्रभाचंद्रमुनीश्वरस्य शिष्यस्तपोमूर्तिरुदारकीर्तिः ।
बभूव भव्याब्जविकासभानुः सतां वरः कल्नेलेदेवनामा ॥२९॥

तस्य शिष्योजनि श्रीमान् रविचन्द्रमुनीश्वरः ।
षट्त्रिंशद्गुणसंयुक्तः शास्त्रवाराशिपारगः ॥४०॥

अपि च श्रीसूरस्तगणः सुदुस्सहतपःशूरैस्तपोराशिभिः
शिष्यैर्लब्धसुधांशुनिर्मलयशोराशिः समुद्भासते ।
मिथ्याज्ञानतमोविभेदनरविर्विद्वत्सभाकौमुदी-
चन्द्रश्रीरविचंद्रपंडित इति ख्यातो यतिग्रामणीः ॥४१॥

तस्य श्रीरविचंद्रपंडितगुरोः शिष्यः सतामग्रणीः
दीनानाथवनीपकव्रजमनःसंतोषसाक्षान्निधिः ।
भव्यांभोरुहषण्डमंडनरविर्जैनागमांभोनिधिः
जातः श्रीरविनंदिदेवमुनिपः सौजन्यजन्मालयः ॥४२॥

तस्याभवन्मुनेः शिष्यस्तपोनुष्ठानतत्परः ।
एळाचार्यो यतिः श्रीमानार्यवर्यः श्रुतांबुधिः ॥४३॥

अपि च

दारिद्र्यातपतप्तदीनजनता संकल्पकल्पद्रुमः
पादांभोरुहभव्यभृंगजनतासंतोषचिंतामणिः ।
एळाचार्यमुनींद्र एष विलसच्चारित्ररत्नाकरः
श्रीमज्जैनमतोदयाचलरविर्विभ्राजते भूतळे ॥४४॥

कोंगळदेशनिवासिनां निरुपमं श्रीकादलूरसंज्ञकं
कल्लब्बारचितस्य जैननिळयस्याभ्यर्चनार्थं कृती ।
एळाचार्यमुनीश्वराय विदुषे ग्रामं नमस्यं स्वयं
धारापूर्वमदाज्जितारिनरपः श्रीमारसिंहो नृपः ॥४५॥

स्वकीयाम्बिकाकल्लब्बाराज्ञीकारितस्य जिनालयस्य सुधाचित्रचित्रादि-पूजार्थं मुनिजनेभ्यश्चतुर्विधदानार्थं च तेनाभिवंद्यमानैर्बालकाळचरितैरप्य-खर्वप्रतिपक्षखंडनैकाखंडलमहितमहीपतिवाहिनीनिवहगहनदहनहुतवहमत्य-न्तविक्रांतप्रत्यंतनृपसमीपवर्ति समवर्तिनामाजिविजयोद्धुरविरोधिवसुधाधि-राजराज्यांगग्रासलालसैकराक्षसराजमवार्यगांभीर्यसागरसाम्राज्यपालनैकपा-शपाणिमसिधाराजलप्रवृद्धबद्धमूळस्तब्धविद्विष्टनृपविपविटपनिर्मूळनानिळ-

मनवरतप्रधानविजयधनसंग्रहधनेश्वरमखिलजगद्वर्तिकीर्तिगंगोद्वहनमहेश्वर-मनुकृष्टाष्टदिक्पाळमशेषराजर्षिमूर्धाभिषिक्तं पितरं सत्यवाक्यभूपति-मनुकुर्वता मारसिंहदेवेन मेलपाटिशिविरमधिवसति विजयस्कन्धावारे शकनृपकालातीतसंवत्सराष्टशतेषु चतुरशीत्यभ्यधिकेषु दुंदुभिसंवत्सरांत-र्गतपौषमासवहुळपक्षनवम्यां मंगळवारस्वातिनक्षत्रगरजकरणधृतियोग-संयोगिनां कन्यालग्ने तत्समयसमाविर्भूतजिनसवनजनितानंदमनुजमुनि-जनसमाजकोलाहलकलकलापूरितदिशायां तत्कालनिराकुलसंचलत्कलि-चंडालसंपर्कपातकातंकपंकक्षालनोद्यतजगज्जनमज्जनक्षोभितभूतलप्रतीतगंधो-दकप्रवाहसहितायाम् उत्तरायणसंक्रांत्यां तस्मै एळाचार्यमुनीश्वराय सकळभूपाळमौलिमाळामकरंदरजःपुंजपिंजरितचरणारविंदयुगलाय शिशिर-करनिकरविशदयशोराशिविशदीकृतसकळमहीतळाय जिनाभिषेकगंधजल-धारापुरस्सरं कोंगलदेशांतर्वर्ती कादलूरनामा ग्रामो दत्तः अस्य सीमा (इस के बाद कन्नड में सीमा का विस्तृत विवरण तथा अन्त में दान की रक्षा के लिए शापात्मक श्लोक हैं)।

इस ताम्रशासन का संक्षिप्त विवरण जै० शि० सं० भाग ४ में दिया है (लेख क्र० ८५)। उस समय मूल पाठ नहीं मिल सका था। ९ ताम्रपत्रों पर लिखे गये इस लेख का प्रारंभिक गद्यभाग तथा ३२ वें श्लोक तक का पद्यभाग गंग राजाओं की वंशावली का वर्णन करता है जो प्रायः जै० शि० सं० भाग २ के लेख १२२ तथा १४२ के समान है। तदनंतर गंग राजा बूतुग जयदुत्तरंग की पत्नी कल्लब्बा (जो चालुक्य राजा सिंहवर्मा की कन्या थी) के पुत्र मारसिंह (द्वितीय) का वर्णन है। इन के भाई का नाम मरुळ था। मारसिंह ने उन की माता द्वारा कोंगल देश में निर्मित जिनमंदिर के लिए सूरस्त गण के एळाचार्य को कादलूर ग्राम दान दिया था। उस समय वे मेलपाटि के स्कन्धावार में थे। दान की तिथि पौष वदी ९ मंगलवार शक ८८४ दुंदुभि संवत्सर की उत्तरायण संक्रांति थी। एळाचार्य की गुरुपरम्परा-मूलसंघ-सूरस्तगण के प्रभाचन्द्र

योगीश-कल्नेलेदेव-रविचन्द्र मुनीश्वर-रविनन्दिदेव-एळाचार्यमुनींद्र इस प्रकार वतायी है।

ए० इं० ३६ पृ० ६७-११०

१८

येडरावी (वेलगांव, मैसूर)

शक ९०१ = सन् ९७९, कन्नड

वर्मदेव मन्दिर के आगे चवूतरे में लगी हुई एक शिला पर यह लेख है। इस में वताया है कि कनकप्रभ सिद्धान्तदेव के चरण धो कर गांव के वारह गावुण्डोंने एळरामे के देहार के लिए संक्रान्ति के अवसर पर कुछ भूमि पुष्य वदी १३ प्रमादि संवत्सर शक ९०१ को दान दी थी।

रि० इ० ए० १९६३-६४, शि० क्र० वी २५६

१९

द्वारहट (अलमोड़ा, उत्तरप्रदेश)

सं० १०४४ = सन् ९८८, संस्कृत-नागरी

चरणपादुका के पास यह लेख है। इस में उक्त वर्ष तथा अर्जिका देवश्री की शिष्या अर्जिका ललितश्री का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९, शि० क्र० सी ३८३

२०

देवगढ (झांसी, उत्तरप्रदेश)

सं० १०५१ = सन् ९९४, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर नं० ७ में है। सं० १०५१ में मन्दिर के द्वार के निर्माण का इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० सी ५०५

२१

कटोरिया (राजस्थान)

सं० १०५२ = सन् ९९५, संस्कृत-नागरी

वागट संघ के श्री सुरसेन के उपदेश से सिंहक, यशोराज तथा नोण्णक इन तीन भाइयों ने एक जिनमूर्ति की स्थापना की ऐसा इस पादपीठ लेख में वर्णन है। यह लेख अजमेर संग्रहालय में रखा है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६८ शि० क्र० वी २३२

२२-२३

वस्तिपुर (मैसूर)

लिपि—१०वीं सदी की, संस्कृत-कन्नड

गाँव के वाहर पहाड़ी पर एक चट्टान पर यह लेख है। इस में जैन आचार्य पुष्पनन्दि के समाधिमरण का वर्णन है। यहीं के एक अन्य लेख में पुष्पनंदि के साथ पुरिमंडल मुनि का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० वी ८०८-९

२४

बम्बई संग्रहालय (मूलस्थान अज्ञात)

लिपि—१० वीं सदी की, तमिळ

अलुंदूर नाडु के एलुमूर ग्राम के इलाडै अरैयन् तिरुवडि की पत्नी तिरुनंगै द्वारा श्रीनामुळूर के मन्दिर में स्थापित जिनमूर्ति का इस लेख में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६३-६४, शि० क्र० वी ३१९

२५

शिंगवरम् (दक्षिण अर्काट, मद्रास)

लिपि–१० वीं सदी की, तमिल

इस में इळैय भटारर् का ३० दिन के उपवास के बाद स्वर्गवास हुआ ऐसा वर्णन है। ग्राम के निकट तिरुनाथर् कूण्रु नामक चट्टान पर यह लेख है।

(मूल तमिल में मुद्रित) सा० इ० इ० १७ पृ० १०४

२६-२७-२८-२९

देवगढ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

लिपि–९वीं–१०वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

ये लेख यहाँ के जैन मन्दिरों में मिले हैं। मन्दिर नं० १४ में एक कायोत्सर्ग मूर्ति के पास श्रीनागसेनाचार्यस्य यह नाम अंकित है। मन्दिर नं० ५ में दूसरा लेख है जो संभवतः किसी यात्री का नाम है। मन्दिर नं० ७ में तीसरा लेख है जिस में मन्दिर के द्वार की स्थापना का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० सी ५१४, ५०१,५०६

यहीं के मन्दिर नं० २६ में निम्नलिखित शब्द पाषाणखण्डों पर पढ़े गये हैं—१) अभाणंदि पभतसः २) डाव ३) अये ४) वीरचन्द्र ५) केशवसुत ६) शुर्ज ७) शिवपुर गोविन्द ८) स्य गंगाख्येनाहिता शुभा। इन की लिपि भी १०वीं सदी की कही गयी है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० सी ३०८

३०

अजमेर संग्रहालय (राजस्थान)

सं० १०६१ = सन् १००४, संस्कृत-नागरी

ज्येष्ठ शु० ८ सं० १०६१ के इस लेख में वा(ग)ट संघ के धर्मसेन तथा श्राविका महादेवी द्वारा जिनमूर्ति की स्थापना का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ४२१

३१

दिल्ली

सं० १०६१ = सन् १००४, संस्कृत-नागरी

राजा वाजार के जैन मन्दिर की एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस को स्थापना सं० १०६१ में गटिल के पुत्र भरत ने की ऐसा लेख में कहा है।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी २२३

३२-३३

भोजपुर (रायसेन, मध्यप्रदेश)

११वीं शताब्दी-पूर्वार्ध, संस्कृत-नागरी

१. ....रे चंद्रार्धमौलिररसमः सम.........
 सद्भुतकी........राजपरमेश्वरभोजदेवः ॥
२. ....रसा(ग)रनंदिनासा । स ने(मि)चं(द्रो) विदधे प्रतिष्ठां
 सुदुर्लभः सा(शां)तिजिनस्य सू— ॥

[यह लेख राजा भोजदेव के राज्य में लिखा गया था। सागरनन्दि तथा नेमिचन्द्र द्वारा शान्तिनाथ मूर्ति की स्थापना का इस में वर्णन है। लेख मूर्ति के पादपीठ पर है।]

रि० इ० ए० १९५९-६० क्र० बी २५३, ए० इं० ३५ पृ० १८५-६

यहीं पर एक अन्य लेख में इसी समय की लिपि में श्री(मृ)दंक ऐसा नाम अंकित हैं जो संभवतः किसी यात्रिक का है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० बी २५६

३४

बचाना (भरतपुर, राजस्थान)

सं० १०७७ = सन् १०२०, संस्कृत-नागरी

पार्श्वनाथ मूर्तिके पादपीठ पर यह लेख है। तिथि फाल्गुन शु० २ सं० १०७७ के अतिरिक्त अन्य विवरण प्राप्त नहीं है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६८ शि० क्र० बी० २३३

३५

बोधन (निजामाबाद, आन्ध्र)

शक ९६३ = सन् १०४२, संस्कृत-कन्नड

किले में एक स्तम्भ पर यह लेख है। नन्दिसिद्धान्तदेव के शिष्य नागनंदि भट्टारक के शिष्य गंडविमुक्त भट्टारक का वहुधान्य नगर में माघ शु० १० शक ९६३ वृष संवत्सर के दिन स्वर्गवास हुआ था ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० बी ११३

३६

कुयिवाल (धारवाड, मैसूर)

शक ९६७ = सन् १०४५, कन्नड

कुय्यबाळ की वसदि के लिए कुछ गावुण्डों द्वारा गुण (भद्र) सिद्धान्तिदेव को दिये गये दान का इस लेख में वर्णन है। उन की शिष्या मोनिमति कन्ति का नाम भी दिया है। चालुक्य सम्राट् त्रैलोक्यमल्ल (सोमेश्वर १) के राज्य का उल्लेख भी है।

(मूल लेख कन्नडमें मुद्रित) सा० इ० इ० २० पृ० ३५-३६

३७

वचाना (भरतपुर, राजस्थान)

सं० ११९० = सन् १०५२, संस्कृत-नागरी

ऋषभदेव की मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। जाह के पुत्र देलूक ने आषाढ़, सं० ११९० में यह मूर्ति स्थापित की थी।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६८ शि० क्र० बी २३४

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ६४३ में भी संभवतः इसी लेखका विवरण है। यद्यपि यहाँ मूर्तिस्थापक का नाम जादु का पुत्र देल्हुक ऐसा पढ़ा गया है, तिथि वही है।

३८

वडोह (विदिशा, मध्यप्रदेश)

सं० (११) १२ = सन् १०५७, संस्कृत-नागरी

यह लेख जिनमन्दिर के द्वार पर है। इस में द्वादसक्क मंडल के आचार्य केवली श्री अभयचन्द्र का नाम तथा उक्त वर्ष अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १६६२

३९

वरंगल (आन्ध्र)

शक ९ (८०) = सन् १०५८, कन्नड

विलम्बि संवत्सर का यह लेख टूटा है। किसी सिद्धांतदेव के शिष्य मुनिसुव्रत का इस में उल्लेख है। यह लेख किले में शंभुनिगुडि के सामने पड़ा है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० २४ शि० क्र० बी ४४

४०

कोलनुपाक (नलगोण्डा, आन्ध्र)

शक ९८९ = सन् १०६७, कन्नड

पेद्दवागु नामक नाले के पास एक स्तम्भ पर यह लेख है। रेवुंडि और नेरिल में राष्ट्रकूट शंकरगंड द्वारा निर्मित बसदियों को जुव्विकुंटे और निडंगलूरु मे पहले कुछ जमीन दान मिली थी जो बाद में अन्य लोगों ने छीन ली थी। महासंधिविग्रहि दण्डनायक केसिमय्य तथा रेव्विसेट्टि, अप्पणय्य आदि की प्रार्थना पर रानी ने कार्तिक शु० १३ सोमवार, प्लवंग संवत्सर, शक ९८९ को उक्त जमीन पुनः उन बसदियों को सौंपी। उक्त समय चालुक्य सम्राट् त्रैलोक्यमल्ल संपरवाडि से राज्य कर रहे थे तथा कोल्लिपाके ७००० प्रदेश पर महासामन्त मेळरस नियुक्त थे।

रि० इ० ए० १९६१-१९६२, शि० क्र० बी ६२

४१

दड्डल (रायचूर), मैसूर

शक ९९१ = सन् १०६९, कन्नड

१ स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्रीपृथ्वीवल्लभ महाराजा-
२ धिराजपरमेश्वरं परमभट्टारकं सत्याश्रय-
३ कुळतिळकं चालुक्याभरणं श्रीमद्भुवनैकमल्लदेवर वि-
४ जयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्क्कतारंब-
५ र सलुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि समधिगतपंचमहा-
६ शब्द महामंडलेश्वरं अरिदुर्द्धरबरभुजासिभासुर प्र-
७ चंडप्रद्यो[त]दिनकरकुळनंदनं काश्यपगोत्रं कलिकालान्वयं का-
८ वेरीवल्लभं कंबलपरेघोषणं मयूरपिच्छध्वजं सिंहलांछ-(नमो)
९ रेयूर्प्पुरवरेश्वरं परचक्र [धव] ळं मा [ळों] ळ-भीमं गोत्रपवित्रं श्री-
१० मन्महामंडलेश्वरं पेडकलुजटाचोळभीममहाराजरु ॥ समधिगतपंच-
११ महाशब्द महासामन्तं विजयलक्ष्मीकांतं माहेष्मतीपुरवरेश्वरं मध्य-
१२ देशाधिपति सहस्रबाहुप्रतापं निजान्वयमाणिक्यनेकवाक्यं चतु-
१३ रचारायणनुपायनारायणं गिरिगोटेमल्लं रिपुहृद-
१४ यसेल्लं विषमहयारूढरेवन्त परबलकृतान्त संगिय-
१५ मरुळं श्रीमन्महासामन्त मानुवेय मळेयमरसर सकव-
१६ र्ष ९९१ नेय सौम्यसंवत्सरदुत्तरायणसंक्रान्तियतिवनि-
१७ मित्यदिं श्रीयुत्तवमन्तकोलद माकिसेट्टियर पोन्नपाळल माडि-
१८ सिद गिरिगोटेमल्लजिनालयक्के पोन्नपाळ पडुवण पोल मेरेय-

१९ लु बिट्ट निगर मत्तरारु आ पोद्दिगेयल् कन्तरिकेयलु निगरं मत्तरा

२० रु कोरविय तेंकवोलदलु बिट्ट निगरं मत्तर्प्पन्नेरडुअन्तु म-

२१ त्त [२] ४ पूदोंट मत्त १ गाण १ मनेय निवेशन ५

२२ सामान्योयं धर्म्मसेतुर्नृपाणां काले काले पालनीयो

२३ भवद्भिः सर्व्वानेतान् भाविनः पार्थिवेन्द्रान् भूयो भूयो याच-

२४ ते रामभद्रः ॥ स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुंधरां ष-

२५ ष्टिं वर्षसहस्राणि विष्टायां जायते क्रिमिः ॥

चालुक्य सम्राट् भुवनैकमल्ल (सोमेश्वर २) के अधीन महामंडलेश्वर जटाचोळ भीम महाराज के अधीन महासामन्त मळेयमरस गिरिगोटेमल्ल के राज्य में माकिसेट्टि द्वारा पोन्नपाळु में निर्मित गिरिगोटेमल्ल जिनालय के लिए कुछ भूमि, उद्यान, तेलघानी और घरों के दान का इस लेख में वर्णन है। शक ९९१ सौम्य संवत्सर की उत्तरायणसंक्रांति के अवसर पर यह दान दिया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ८१५ ए० इं० ३७ पृ० ११३-११६

४२

कोहिर (मेडक, आन्ध्र)

शक ९९१ = सन् १०७०, कन्नड

चालुक्य सम्राट् भुवनैकमल्ल (सोमेश्वर २) के राज्यकाल में पौष शक ९९१ सौम्य संवत्सर में पडवळ चावुण्डमय्य द्वारा निर्मित वसदि के लिए दान का इस लेख में वर्णन है। मन्दिर निर्माता के गुरु शुभचन्द्र सिद्धान्तदेव थे। प्रादेशिक शासक के रूप में पंपपेर्मानडि का नाम उल्लिखित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ बी ५७

४३

देवगढ (झांसी, उत्तरप्रदेश)

सं० १(१) २६ = सन् १०७०, संस्कृत-नागरी

मन्दिर नं० १९ में यह लेख है। सं० १(१)२६ से ठकुर सीलक की पत्नी मोहिनी द्वारा पद्मावती मूर्ति की स्थापना का इस में वर्णन है। इस के लेखक का नाम गोपाल पण्डित बताया है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० सी ३०४

४४

तडखेल (नांदेड, महाराष्ट्र)

शक ९९३ = सन् १०७१, कन्नड

मल्लेश्वर मन्दिर में पड़ी हुई एक शिल्पांकित शिला पर यह लेख है। पुष्य व० ५ शुक्रवार शक ९९३ साधारण संवत्सर, उत्तरायण संक्रान्ति के अवसर पर यह दान की प्रशस्ति लिखी गयी थी। चालुक्य सम्राट् भुवनैक-मल्ल (सोमेश्वर २) के राज्यकाल में वाजिकुल के दण्डनायक कालि-मय्य ने निगलंक जिनालय को कुछ भूमि दान दी तथा दण्डनायक नागवर्मा ने उस के लिए एक उद्यान व तेलघानी दान दी ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी १९४

४५

तलेखान (रायचूर, मैसूर)

शक ९९४ = सन् १०७२, कन्नड

उपर्युक्त गांव के पूर्व की ओर २ मील पर एक खेत में यह लेख है। तनकवाडि के ऊरोडेय अम्मय्य द्वारा निर्मित बसदि (जिनमन्दिर) के लिए आषाढ़ शु० ५ शक ९९४ दुन्दुभि संवत्सर के दिन कुछ भूमि दान

दिये जाने का इस में वर्णन है। तत्कालीन शासक के रूप में चालुक्य वंश के राजा जगदेकमल्ल (जयसिंह द्वितीय) तथा दण्डनायक पोळलमय्य का नाम उल्लखित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी ७२०

४६

बोधन (निजामाबाद, आन्ध्र)

शक ९९५ = सन् १०७२, संस्कृत-कन्नड

क़िले में एक स्तम्भ पर यह लेख है। इस में भाद्रपद कृ० ८ शनिवार शक ९९५ को चन्द्रप्रभाचार्य के स्वर्गवास का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ११४

४७

अजमेर संग्रहालय (राजस्थान)

सं० ११३० = सन् १०७४, संस्कृत-नागरी

फाल्गुन शु० ११ सोमवार सं० ११३० के इस मूर्तिलेखमें भा; व उस के पिता का नाम अंकित है। लेख खण्डित है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र०

४८

बडोह (विदिशा, मध्यप्रदेश)

सं० ११३४ = सन् १०७८, संस्कृत-नागरी

यह लेख जिनमन्दिर के द्वार पर है। इस में उक्त वर्ष तथा आचार्य मन्त्रवादी देवचन्द्र का एवं श्रीवारुदेव का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १६६३-६४

४९-५०

देवगढ़ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

सं० ११३५-६ = सन् १०७९-८०, संस्कृत-नागरी

यह लेख यहाँ के मन्दिर नं० २० की एक जिनमूर्ति की स्थापना के विषय में है। इस में सं० ११३६ में जसोवर के पुत्र (नाम अस्पष्ट) का उल्लेख है। यहीं के एक अन्य लेख में सं० ११३५ में आर्यिका लवणश्री का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, शि० क्र० सी १८६,१८३

५१

अजमेर संग्रहालय (राजस्थान)

सं० ११३(७) = सन् १०८०, संस्कृत-नागरी

वैशाख शु० ५ सं० ११३(७) के इस मूर्तिलेख में चन्दन के पुत्र वीर ग नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ४२७

मध्य
ने

५२

चिंतलवाट (मेडक, आन्ध्र)

चालुक्य विक्रम वर्ष ६ = सन् १०८१, कन्नड

ग्राम के पूर्व में एक मील पर पड़ी शिला पर यह लेख है। पुष्य शु० १४ गुरुवार चालुक्य विक्रम वर्ष (६) दुन्दुभि संवत्सर के दिन महासामन्त कद्रस ने माधवचन्द्र सिद्धांतदेव के चरण धो कर जिनमन्दिर के लिए कुछ दान दिया था ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी २१७

५३

अल्लदुर्गम् (मेडक, आन्ध्र)

चालुक्य विक्रम वर्ष ९ = सन् १०८४, कन्नड

आश्वयुज शु० ९ बुधवार, रक्ताक्षी संवत्सर, चालुक्य विक्रम वर्ष ९ का यह लेख है। महामण्डलेश्वर आहवमल्ल पेर्मानडि की ओर से कीर्तिविलास शांतिजिनालय में ऋषियों को आहारदान देने के लिए कुछ भूमि आचार्य कमलदेव सिद्धान्ती को दान दी गयी ऐसा इस में वर्णन है।

(मूल कन्नड में मुद्रित) आन्ध्र प्रदेश आर्कि० सीरीज ३ पृ० ४५

५४

कोण्णूर (बेळगाँव, मैसूर)

चालुक्य विक्रम वर्ष १२ = सन् १०८७, कन्नड

चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल के अन्तर्गत रट्ट वंश के सामन्त जयकर्ण के राज्य में महाप्रभु निधियम गामुंड ने मूलसंघ के एक जिनमन्दिर को २ मत्तर जमीन, तेलघानी तथा उद्यान दान दिया ऐसा इस लेख में वर्णन है। पौष कृ० चतुर्थी (या चतुर्दशी), प्रभव संवत्सर, चालुक्य विक्रम वर्ष १२ ऐसी इस की तिथि बतायी है।

क० रि० इ० १९४१-४२, शि० क्र० ४९

५५

पुदूर (महबूबनगर, आन्ध्र)

चालुक्य विक्रम वर्ष १२ = सन् १०८७, कन्नड

गाँव की चावडी (पंचायत भवन) के पास पड़ी शिला पर यह लेख है। चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल कल्याण से राज्य कर रहे थे उस

समय चालुक्य विक्रम वर्ष १२, प्रभव संवत्सर की पुष्य अमावास्या, रविवार, उत्तरायण संक्रान्ति के अवसर पर पुण्डूर के महामण्डलेश्वर जत्तरस ने तिक्कप्प दण्डनायक को पार्श्वदेव की पूजा के लिए भूमि, उद्यान और कुछ अन्य आय के साधनों का दान दिया। इस देवमूर्ति की स्थापना *मूलसंघ-देशीगण-पुस्तक गच्छ-कोण्डकुन्दान्वय* के *पद्मनंदि मल*-धारिदेव ने की थी।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी ८२

५६

पुदूर (महबूबनगर, आन्ध्र)

सन् १०८७, कन्नड

पुष्य अमावास्या रविवार प्रभव संवत्सर चालुक्य विक्रम वर्ष २१ (सम्पादक के कथनानुसार यह वर्ष ११ होना चाहिए क्योंकि तिथि-वार की गणना उसी वर्ष में ठीक पड़ती है) को चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल जब कल्याण से राज्य कर रहे थे तब महामण्डलेश्वर हल्लवरस ने द्रविड़ संघ के पल्लवजिनालय के लिए कनकसेन भट्टारक को भूमि दान दी ऐसा इस लेख में वर्णन है।

आन्ध्रप्रदेश आर्कि० सीरीज २२ शि० क्र० ७९

५७

किशनगढ़ (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० ११५० = सन् १०९४, संस्कृत-नागरी

पार्श्वनाथ मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। ज्येष्ठ व० १ सं० ११५० इस तिथि के अतिरिक्त अन्य विवरण नहीं मिलता।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४३५

५८

इंगळगी (गुलबर्गा, मैसूर)

चालुक्य विक्रम वर्ष १८ = सन् १०९४, कन्नड

यह लेख चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल तथा रानी जाकल देवी के राज्य के समय फाल्गुन शु० १० सोमवार चालुक्य विक्रम वर्ष १८ श्रीमुख संवत्सर के दिन लिखा गया था। इस में एक जिनमूर्ति की स्थापना व कुछ दान का वर्णन है। लेख नागार्जुन पण्डित ने लिखा था।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० बी ४४१

५९

भोजपुर (रायसेन, मध्यप्रदेश)

सं० ११५७ = सन् ११००, संस्कृत-नागरी

१ संवत ११५७ (श्री) नरवर्म्मस्वा[सा]म्राज्ये वेम-

२ कान्वय[ये] नेमिचंधु[द्र] स[सु]तः स्रे[श्रे]ष्टी रामाख्यो नृ-

३ णि सुतियः तत्पुत्रचिल्लणाख्येन जि[न]

४ युग्मं प्रतिष्टितं

[राजा नरवर्मा के राज्य में सं० ११५७ में वेमक कुल के नेमिचन्द्र के पुत्र राम श्रेष्टी के पुत्र चिल्लण ने दो जिनमूर्तियाँ स्थापित कीं। यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है।]

रि० इ० ए० १९५९-६० क्र० बी २५२, ए० इं० ३५ पृ० १८६

६०

वीदर (मैसूर)

लिपि–११वीं सदी की, कन्नड

यह अधूरा लेख संग्रहालय में रखा है। जिनशासन की प्रशंसा से इस का प्रारम्भ होता है। यम-नियम आदि शब्दों से प्रारम्भ होने वाली एक प्रशस्ति बाद में है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६१ शि० क्र० वी १८३

६१-६२-६३

हनुमकोण्ड (वरंगल, आन्ध्र)

लिपि–११वीं सदी की, कन्नड-तेलुगु

यहाँ पहाड़ी पर पद्माक्षी देवी के मन्दिर के पास तीन लेख खुदे हैं। इन में एक बहुत अस्पष्ट है। दूसरे में निम्नलिखित नाम हैं—

श्रीप्रभाचंद्रदेवर माधवशेट्टि

तीसरे लेख में कन्नवोय यह नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९, शि० क्र० वी ११९-२१

६४

पटना संग्रहालय (विहार)

लिपि–११वीं सदी की, संस्कृत–नागरी

विहार शरीफ से प्राप्त स्तम्भ पर यह लेख है। इस में किसी जैन आचार्य की प्रशंसा है।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० वी १०–

६५

बोधन (निजामाबाद, आन्ध्र)

लिपि–११वीं सदी की, संस्कृत-कन्नड

किले में एक स्तम्भ पर यह लेख है। देवेन्द्र सिद्धान्तमुनीश्वर के शिष्य शुभनंदि के समाधिमरण का यह स्मारक है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ११२

६६–६७

हळेबीड (हासन, मैसूर)

लिपि–११वीं सदी की, कन्नड

केदारेश्वर मन्दिर में पड़ी हुई शिला पर यह लेख है। मूलसंघ-देशिगण—पुस्तक गच्छ—कोण्डकुन्दान्वय के नेमिचन्द्र भट्टारक के शिष्य मल्लिसेट्टि के पुत्र हरिसदेव और तिप्पण्ण ने इस पार्श्वमूर्ति की स्थापना की थी। यहीं के एक और खण्डित लेख में पुणिसजिनालय का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६३–६४ शि० क्र० बी ३६१-२

६८

मद्रास (मूलस्थान अज्ञात)

लिपि—११वीं सदी की, तमिल

महावीर मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। तिरुक्कोविलूर के किसी सज्जन (नाम अस्पष्ट) ने यह मूर्ति स्थापित की थी।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी २९६

६९–७०

धर्मपुरी (बीड, महाराष्ट्र)

लिपि—११वीं सदी की, कन्नड

(१) यह लेख खण्डित है। इस में यापनीय संघ का तथा प्रशस्ति लेखक के रूप में ईश्वरभट्ट का उल्लेख है। (२) इसमें यापनीय संघ-वंदियूर गण के महावीर पण्डित को पोट्टलकेरे पंचपट्टण की ओर से कुछ करों की आय अर्पित की गयी थी। ये पण्डित धर्मपुर की (वेसकि) सेट्टिय बसदि के प्रमुख थे।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० वी ४६०-१

७१

ततिकोण्ड (वरंगल, आन्ध्र)

लिपि—११ वीं सदी की, संस्कृत-कन्नड

इस अधूरे लेख में चन्द्रसूरि, नयभद्रसूरि तथा मुनिसुव्रत का नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० २४, शि० क्र० वी ४१

७२

बोधन (निजामाबाद, आन्ध्र)

११वीं सदी का अन्तिम या १२वीं सदी का प्रारम्भिक भाग, संस्कृत–कन्नड

किले में रखे हुए एक स्तम्भ पर यह लेख है। इस में चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल के राज्य-काल में एक जिन-मन्दिर को मिले कुछ दानों का वर्णन है। श्रेष्ठिकुल के कुछ लोगों तथा नालिकांविका के नाम भी मिलते हैं।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० वी ११५

७३

खजुराहो (छतरपुर, मध्यप्रदेश)

लिपि–११वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर में एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में क्षेत्रपाल वारेन्द्र का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० सी १७४०

७४-७५-७६-७७-७८

खजुराहो (छतरपुर, मध्यप्रदेश)

लिपि–११वीं-१२वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

ये पाँच लेख हैं। प्रथम तीन जिनमूर्तियों के पादपीठों पर हैं। एक में आम्रनन्दि भट्टारक तथा कालसेन-जिनालय के नाम हैं। दूसरे में आम्रनन्दि तथा कुलन्धर के पुत्र जिनदास के घरवास-जिनालय के नाम हैं। तीसरे में दुर्लभनन्दि के शिष्य रविचन्द्र के शिष्य सर्वनन्दि आचार्य का नाम है। शेष दो लेख जिनमन्दिर के द्वार पर हैं। इन में भट्टपुत्र श्रीगोलुण तथा भट्टपुत्र देवशर्मा के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए०१९६३-६४, शि० क्र० सी १९४०, १९४४-४५, १९४७-४८

७९

तंटोली (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० ११६१ = सन् ११०४, संस्कृत-नागरी

एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। फाल्गुन शु० ३ शुक्रवार सं० ११६१ यह इस मूर्ति की स्थापना की तिथि बतायी है तथा श्रेष्ठि धमानाक के लिए बोधि ने यह स्थापित की ऐसा कहा है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ४१२

८०

हैदराबाद संग्रहालय (मूलस्थान संभवतः गोव्वूर, आन्ध्र)

चालुक्य वि० वर्ष ३३ = सन् ११०९, कन्नड

चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल जयन्तीपुर से राज्य कर रहे थे उस समय हिरिय गोव्वूरु के अग्रहार के कम्मटकारों (टकसाल के कर्मचारियों) द्वारा ब्रह्मजिनालय में चैत्र पवित्र पूजा के लिए कुछ धन दान दिया गया था। तिथि माघ पौर्णिमा, सोमवार, सर्वधारी संवत्सर, चालुक्य वि० वर्ष ३३ बतायी है।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी २१

८१

कोलनुपाक (नलगोण्डा, आन्ध्र)

चालुक्य विक्रम वर्ष ५० = सन् ११२५, संस्कृत–कन्नड

सोमेश्वर मन्दिर के पीछे तालाब में एक स्तम्भ पर यह लेख है। चैत्र व० ३ सोमवार, विश्वावसु संवत्सर, चालुक्य विक्रम वर्ष ५० यह इस की तिथि है। दण्डनायक महाप्रधान मनेवेर्गडे सायिपय्य के निवेदन पर राजकुमार सोमेश्वर ने अम्बरतिलक की अम्बिकादेवी के लिए पाणुपुर ग्राम दान दिया था। इस दान में से वह जमीन मुक्त रखी गयी थी जो पोळलु के निकट की अक्कबसदि को पहले दी गयी थी। दान की व्यवस्था देविय पेर्गडे केशिराज को सौंपी गयी थी। काणूरगण—मेपपाषाण गच्छके जैन आचार्यों का तथा अम्बिका मन्दिर में केशिराज द्वारा मानस्तम्भ व मकरतोरण के निर्माण का भी इस लेख में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ९२

मूल कन्नड में आन्ध्र प्रदेश आर्कि० सीरीज नं० ३ में प्रकाशित।

८२-८३-८४-८५

गोर्टे (बीदर, मैसूर)

भूलोकवर्ष ५ = सन् ११२०, कन्नड

महादेवप्प कनकटे के खेत में एक स्तम्भ पर यह लेख है। श्रावण व० ७ सोमवार, साधारण संवत्सर, भूलोकवर्ष ५ के दिन त्रिभुवनसेन सिद्धान्तदेव के समाधिमरण का इस में वर्णन है। यहीं के एक अन्य स्तम्भ पर इसी समय की लिपि में एक जैन आचार्य, सिंगिसेट्टि तथा वर्धमान के नाम अंकित हैं। इसी गाँव के महादेव मन्दिर में लगी हुई एक शिला पर इसी समय की लिपि में त्रिभुवनसेन सिद्धान्तदेव के शिष्य हम्मिकव्वे के पुत्र चिन्निसेट्टि और वाचण द्वारा एक देवी मूर्ति की स्थापना का वर्णन है। इसी मन्दिर की एक अन्य शिला पर मुनिसुव्रत सिद्धान्तदेव के शिष्य वसविसेट्टि और लोकणव्वे के पुत्र रेवसेट्टि और जिन्नण द्वारा पद्मावती मूर्ति की स्थापना का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ७६७-८ तथा ७६२-३

८६

वरंगल (आन्ध्र)

सन् ११३२, कन्नड

परिधाविसंवत्सर, श्रावण शु० ११ रविवार का यह लेख पद्यबद्ध है। वन्दियूरगण के गुणचन्द्र महामुनि के स्वर्गवास का इस में वर्णन है। लिपि १२वीं सदी की है अतः संवत्सर नामानुसार उपर्युक्त वर्ष बताया गया है। लेख किले में खुशमहल के सामने पड़ा है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० २४ शि० क्र० बी० ४५

८७

बडोह (विदिशा, मध्यप्रदेश)

सं० ११८९ = सन् ११३३, संस्कृत-नागरी

एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में साधु धीतू की पत्नी छीहिली तथा प्राग्वाट कुल के जाल्हण के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० सी १६६१

८८

अजमेर संग्रहालय (राजस्थान)

सं० ११९५ = सन् ११३८, संस्कृत-नागरी

वैशाख शु० ३ सं० ११९५ के इस लेख में पण्डित गुणचन्द्र का नामोल्लेख है। यह शान्तिनाथमूर्ति के पादपीठ पर है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४२६

८९

बघेरा (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० ११९५ = सन् ११३८, संस्कृत-नागरी

यह लेख ऋषभदेव की मूर्ति के पादपीठ पर है। वैशाख शु० १२, सं० ११९५ यह इस की तिथि है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ४३१

९०

गुण्डबळे (उत्तर कनडा, मैसूर)

शक १०६३ = सन् ११४२, कन्नड

कदम्ब वंश के महामण्डलेश्वर मल्लदेव शिशुकलि से राज्य करते थे उस समय पुष्य शु० ५ रविवार शक १०६३ दुन्दुभि संवत्सर का यह लेख है। दण्डनायक माचरस द्वारा निर्मित पार्श्वनाथ मन्दिर को दिये गये दान का इस में वर्णन है। यह लेख सन्धिविग्रही पमण ने लिखा तथा बप्पोज ने उत्कीर्ण किया था।

क० रि० इ० १९४१-४२, शि० क्र० ३६

९१

बघेरा (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० १२०१ = सन् ११४५, संस्कृत-नागरी

पौष व० २ सं० १२०१ सोमवार इस तिथि का यह लेख कुन्थुनाथ मूर्ति के पादपीठ पर है। सिद्धान्तिक पद्मसेन, उदयकीर्ति, पाल्हू, धनपति, वील्हण तथा लषम हरिचन्द्र के नाम इस में अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ४३२

९२

आगरा (उत्तरप्रदेश)

संवत् १२०२ = सन् ११४५, नागरी-संस्कृत

सं० १२०२ मार्ग्ग वदि ५ सोमे श्रीमूलसंघे साधुश्रीजिणचंद्र सुत साधु श्रीअनंतपालचंद्रपालौ प्रणमति नित्यं आराथा–(?) पंडितश्रीमहेंद्र-देवः

उपर्युक्त लेख आगरा के दि० जैन नया मन्दिर, वेलनगंज में स्थित श्रीपार्श्वनाथ की काले पाषाण की दो फुट ऊँची परिकर सहित पद्मासन मूर्ति के पादपीठ पर है। स्थानीय पूछताछ से पता चला कि उक्त मूर्ति चोरों के एक गिरोह से बरामद हुई थी। मूलसंघ के साधु जिनचन्द्र के पुत्र *अनन्तपाल तथा चन्द्रपाल द्वारा सं० १२०२ में यह मूर्ति स्थापित की* गयी थी। पण्डित महेन्द्रदेव ने यह प्रतिष्ठा सम्पन्न करायी थी। दूसरी पंक्ति का अन्तिम शब्द अस्पष्ट है। उक्त विवरण सम्पादक द्वारा ता० ५-६-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के समय अंकित किया गया था।

९३-९४

देवगढ़ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

सं० १२०२ व १२०८ = सन् ११४६ व ११५२, संस्कृत-नागरी

ये दो जिनमूर्तियों के पादपीठों के लेख हैं। पहला सं० १२०२ का लेख मन्दिर नं० ३ में तथा दूसरा सं० १२०८ का मन्दिर नं० १६ में मिला है। तिथि के अतिरिक्त अन्य विवरण अप्राप्त है।

रि० इ० ए० १९५६-५७ शि० क्र० सी १२६, १७४

९५

वघेरा (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० १२०३ = सन् ११४७, संस्कृत-नागरी

कुन्थुनाथमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। वैशाख शु० ९ सं० १२०३ यह इस की तिथि है। इस में दरसा के पुत्र पालू और (भ)रत का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४३३

९६

कुयिबाळ (धारवाड, मैसूर)

सन् ११४८, कन्नड

चालुक्य सम्राट् जगदेकमल्ल २ के राज्य वर्ष ११ में कुय्यबाळ की बसदि के लिए हेर्गडे मादिराज व आदित्यनायक द्वारा कुछ करों की आय अर्पित की गयी ऐसा इस लेख में वर्णन है।

(मूल लेख कन्नड में मुद्रित) सा० इ० इ० २० पृ० १५५

९७

लखनऊ संग्रहालय (उत्तरप्रदेश)

सं० १२०९ = सन् ११५२, संस्कृत-नागरी

एक जिनमूर्ति के पादपीठ लेख में उक्त वर्ष ज्येष्ठ शु० ३ बुधवार यह तिथि तथा मूलसंघ-लंबकंचुकान्वय के साधु गोहड का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० सी ४२३

९८

सुलतानपुर (पश्चिम खानदेश, महाराष्ट्र)

सं० १२१(?) = लगभग सन् ११५४, संस्कृत-नागरी

इस मूर्तिलेख में पुन्नाट गुरुकुल के अमृतचन्द्र के शिष्य विजयकीर्ति का नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी २३१

९९

देवगढ़ (झांसी, उत्तरप्रदेश)

सं० १२१० = सन् ११५४, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७ में यह लेख है। सं० १२१० में महासामन्त उदयपाल का इस में नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ५०७

१००

खजुराहो (छतरपुर, मध्यप्रदेश)

संवत् १२१५ = सन् ११५८, नागरी-संस्कृत

॥ श्रीसंवतु १२१५ माघ सुदि ५ रवौ देशीगणे पडितः श्रीराजनंदि तद्सिष्य पंडितः श्रीभानुकीर्ति अर्जिका मेकुश्री अभिनन्दनस्वामिनं नित्यं प्रणमंति ॥

यह लेख खजुराहो के श्रीशान्तिनाथ मन्दिर में स्थित जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। तात्पर्य मूल लेख से स्पष्ट ही है। दिसम्बर १९६६ में प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर यह विवरण अंकित किया गया था।

१०१

नासून (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० १२१६ = सन् ११६०, संस्कृत-नागरी

जैन सरस्वती मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। वैशाख शु० (४) सं० १२१६ के इस लेख में माथुर संघ के आचार्य चारुकीर्ति के शिष्य सोनम और राहिल की कन्या वीग का नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० वी ४१९

१०२

जालोर (राजस्थान)

सं० १२१७ = सन् ११६१, संस्कृत-नागरी

श्रावण व० १ गुरुवार सं० १२१७ के इस लेख में उद्धरण के पुत्र जिसा(लि)व द्वारा पार्श्वनाथ मन्दिर में दो स्तम्भों की स्थापना का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४८९

१०३

उज्जिलि (महबूबनगर, आन्ध्र)

शक १०८९ = सन् ११६७, कन्नड

पुष्य शु० १३ शक १०८९ पराभव संवत्सर उत्तरायण संक्रान्ति के दिन राजधानी उज्जिवोळल के वद्दिजिनालय को कुछ करों की आय व भूमि दान दी गयी ऐसा इस लेख में वर्णन है। यह दान महाप्रधान सेनाधिपति श्रीकरण भानुदेवरस—जो कल्लकेळगुनाडु का दण्डनायक था—ने सौधरे केशवय्य नायक की सहमति से आचार्य इन्द्रसेन पण्डितदेव को दिया था।

(मूल कन्नड में मुद्रित) आन्ध्र प्रदेश आर्कि० सीरीज ३, पृ० ४०-४३

१०४

उज्जिलि (महबूबनगर, आन्ध्र)

लगभग सन् ११६७, कन्नड

मार्गशिर शु० ५ गुरुवार शक ८८८ प्रभव संवत्सर का यह लेख है। इस में श्रीवल्लभचोळ महाराज द्वारा राजधानी उज्जिवोळल के वद्दिजिनालय के लिए भूमि व उद्यान के दान का वर्णन है। द्राविळ संघ-सेनगण-

कौरूर गच्छ का यह मन्दिर था। यहाँ के आचार्य का नाम इन्द्रसेन पण्डित तथा मुख्य तीर्थंकर मूर्ति का नाम चेन्नपार्श्वदेव था। संपादक के कथनानुसार इस लेख की तिथि ग़लत प्रतीत होती है। ऊपर इसी स्थान का शक १०८९ का लेख दिया है उसी के आस-पास के समय का यह लेख होना चाहिए क्योंकि दोनों में उल्लिखित मन्दिर व आचार्य का नाम एक ही है।

(मूल कन्नड में मुद्रित) आन्ध्रप्रदेश आर्कि० सीरीज २ पृ० ४०-४३

१०५-१०६

सुरपुर खुर्द (जोधपुर, राजस्थान)

सं० १२२९ = सन् ११७२, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर के दो स्तम्भों पर ये लेख हैं। *आहड़ की पत्नी तथा देव*-घर की माता सूहवा द्वारा उक्त वर्ष में नेमिनाथ मन्दिर में दो स्तम्भ लगवाये गये तथा इस के लिए १० द्रम्म खर्च हुआ ऐसा इन में कहा गया है।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी ५७०-१

१०७

वघेरा (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० १२३१ = सन् ११७५, संस्कृत-नागरी

पार्श्वनाथमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। चैत्र शु० १३ सं० १२३१ इस की तिथि है। माथुर संघ के साढा के पुत्र दूलाक का नाम इस में अंकित है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४३०

१०८

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १२३६ = सन् ११८०, संस्कृत-नागरी

यहाँ की पहाड़ी पर मन्दिर नं० ३४ में एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। स्थापना के उक्त वर्ष के अतिरिक्त अन्य भाग अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३३२

१०९

हस्तिनापुर (मेरठ, उत्तर प्रदेश)

सं० १२३७ = सन् ११८०, नागरी-संस्कृत

१ संवत १२३७ वैसाख सुदि १२ सोमे
२ श्रीअजयमेरवास्तव्य खंडेलवालान्वये
३ साधुश्रीदेवपालपुत्र वील्हा तस्य
४ भार्या खीद्री तेषामर्थे ढोल्ली
५ स्थितेन पुत्रनेमिचंद्रेण श्रीसांतिनाथस्य
६ प्रतिमा कारापिता नित्यं प्रणमति
७ सत्रकारवस्ते पुत्रस्य सामलसाड्व:
८ गंगाधरस्य घटितां ....

उपर्युक्त लेख हस्तिनापुर के दि० जैन मन्दिर में रखी हुई काले पाषाण की श्रीशान्तिनाथ की मूर्ति के पादपीठ पर है। मूर्ति की स्थापना अजमेर के खण्डेलवाल जाति के साधु देवपाल के पुत्र वील्हा तथा उन की पत्नी खीद्री के लिए उन के पुत्र ढोल्लो (दिल्ली) निवासी नेमिचन्द्र ने की थी। स्थापना-तिथि पहली पंक्ति में अंकित है। आखिरी दो पंक्तियों

का तात्पर्य अस्पष्ट है—सम्भवतः मूर्ति के शिल्पकार का नाम गंगाधर बताया गया है। मूर्ति खड्गासन ४ फुट ऊँची है। चरणों के पास दो चामरधारी हैं तथा उन के नीचे एक स्त्री व एक पुरुष की आकृतियाँ (जो सम्भवतः बील्हा व खोद्रो की हैं) अंकित हैं। उक्त विवरण सम्पादक ने ३०-५-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर अंकित किया था।

११०

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १२४८ = सन् ११९१, संस्कृत-नागरी

यहाँ की पहाड़ी पर मन्दिर नं० ७६ में रखी हुई एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। उक्त वर्ष तथा मूर्तिस्थापक साधु सिवराज व उन की पत्नी का इस मे उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ३९६

१११

येत्तिनहट्टि (रायचूर, मैसूर)

शक १ (१) १७ = सन् ११९४, संस्कृत-कन्नड

इस लेख में आश्वयुज व० ११ मंगलवार शक १ (१) १७ आनंद संवत्सर के दिन द्राविळ संघ के अजितसेन मुनि के समाधिमरण का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी ३८७

११२

नगरपालिका संग्रहालय, अलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

लिपि—१२वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

इस संग्रहालय में अम्बिका देवी की भव्य मूर्ति है जिस के चारों अं परिकर में अन्य शासनदेवताओं की छोटी मूर्तियों के नीचे निम्नलिखित नाम अंकित हैं—

१ प्रजापति २ सुषदा ३ काली ४ महाकाली
५ गोरी ६ वैरोजा ७ अनंतमती ८ जया
९ वहुरूपिणी १० चामुंडा ११ सरस्वती १२ पदुमावती
१३ विजया १४ अपराजिता १५ महामानुषा
१६ अनंतमतो १७ गंधारी १८ मानुषी
१९ जालमालिनी २० मनुजा २१ वज्रसंकला

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ५३३ से ५५७

११३

चित्तौड़ (राजस्थान)

लिपि—१२वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

इस खण्डित लेख में खुमाण वंश के राजा जैत्रसिंह का नामोल्लेख है। चित्रकूट के प्राग्वाट यशोनाग के वंश का वर्णन है। चाहमान, परमार व गुर्जरों द्वारा पूजित आचार्य शुभचन्द्र का वर्णन है। जैन मन्दिर के निर्माण के स्मारक के रूप में इस लेख की रचना शुभकीर्ति ने की तथा सोढाक ने इसे उत्कीर्ण किया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ८३६

११४

गेरसोप्पा (कारवार, मैसूर)

लिपि—१२वीं सदी की, संस्कृत-कन्नड

इस लेख में जैनधर्मीय शान्त की प्रशंसा है। होल्ल का वर्णन है तथा शंखदेव की प्रशंसा है। लेख खण्डित है।

इस लेख की शिला हावेरी के पुरातत्त्व विभाग कार्यालय में रखी है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६५ शि० क्र० वी २१५

११५

अमरावती (रायचूर, मैसूर)

लिपि—१२वीं सदी की, कन्नड

यह लेख बहुत अस्पष्ट हुआ है। इस में कुछ जैन आचार्यों का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२—६३ शि० क्र० वी ८१०

११६

गुडिगेरी (धारवाड, मैसूर)

लिपि—१२वीं या १३वीं सदी की, कन्नड

इस लेख में गुडिगेरे की मूरेय बसदि के लिए केतय्य द्वारा कुछ तेल के दान का वर्णन है।

(मूल कन्नड में मुद्रित) सा० इ० इ० २० पृ० ३४९

११७

लोकापुर (वेलगाँव, मैसूर)

लिपि—१२वीं सदी की, कन्नड

यापनीय संघ-कण्डूर गण के सकलेन्दु सिद्धान्तिक के शिष्य उभय सिद्धान्त चक्रवर्ती नागचंद्रसूरि के उपदेश से कल्लगावुण्ड के पुत्र ब्रह्म ने पुरुदेव (ऋषभनाथ) की मूर्ति स्थापित की ऐसा इस लेख में वर्णन है। इस मूर्ति के शिल्पकार का नाम देवलक्खोज था।

क० रि० इ० १९४२-४३ शि० क्र० ४७

११८

अक्किगुंद (सांगली, महाराष्ट्र)

लिपि—१२वीं सदी की, कन्नड

मूल संघ-सूरस्त गण के जयकीर्ति भट्टारक के शिष्य पद्गुमि गौडि, सुगिगौडि (जो हरति निवासी थे) आदि ने अनंत तथा चन्दनषष्ठी व्रत के उद्यापन के समय चौबीस तीर्थंकर मूर्ति की स्थापना की ऐसा इस लेख में वर्णन है।

क० रि० इ० १९४२-४३, शि० क्र० ४९

११९-१२०-१२१

कुंचूर (धारवाड, मैसूर)

लिपि—१२वीं सदी की, कन्नड

ये तीन शिलालेख हैं। पहले में मूलसंघ-देशीगण-कोण्डकुन्दान्वय के नाडकुमार जोगिसेट्टि के पुत्र बम्मय्य द्वारा एक जिनमूर्ति की स्थापना

का वर्णन है। दूसरे में मूलसंघ-सूरस्थ गण के चामुण्ड के पुत्र कालियण्ण का उल्लेख है। तीसरा लेख शिल्पाकृतियों से सुशोभित शिलापर है किन्तु श्रीमत्परमगम्भीर इत्यादि मंगल श्लोक के बाद टूट गया है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० ४७ शि० क्र० बी २९९-९८-९९

१२२

गंगापुरम् (महबूबनगर, आन्ध्र)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड़

चेन्नकेशवमन्दिर के सामने पड़ी एक शिला पर यह लेख है। तुंबाळ के महावड्डव्यवहारि मणिगार काळिसेट्टि द्वारा एक जिनमन्दिर के निर्माण तथा चेन्न पार्श्वनाथ मूर्ति की स्थापना का इस में वर्णन है। उक्त मन्दिर को कुछ वस्तुओं पर लगाये गये करों की आय अर्पित की गयी थी। चालुक्य वंश के तैलप और नयकीर्ति देव की प्रशंसा भी लेख में है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ३९

१२३

हळेबीड (हासन, मैसूर)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

इस खण्डित लेख में मलधारिदेव के शिष्य दासिसेट्टि द्वारा बनवाये आलय (सम्भवतः जिन मन्दिर) का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ४७७

१२४

नागै (गुलबर्गा, मैसूर)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड़

इस लेख में श्रीमत्परमगम्भीर इत्यादि मंगलाचरण है। शेष भाग अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी ४५९

१२५

तेंगली (गुलबर्गा, मैसूर)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

पाण्डुरंग मन्दिर में रखी एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। यापनीय संघ–वड्डियुर गण के नागवीर सिद्धान्तदेव के शिष्य बम्मदेव ने यह मूर्ति स्थापित की ऐसा लेख में बताया है।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी ५११

१२६

चितापुर (गुलबर्गा, मैसूर)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

यह लेख रेलवे स्टेशन के पास पड़ा है। मूलसंघ–देशीगण पुस्तक-गच्छ–कोण्डकुन्दान्वय की घटान्तकिय वस्ति का जीर्णोद्धार रविदेवरस, गोविन्दरस, पिरिय मबुवरस तथा किरिय मबुवरस ने किया ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० बी ४२८

१२७

रामलिंग मुद्‌गड (उस्मानाबाद, महाराष्ट्र)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

इस शिला की एक बाजू में अभयनन्दि भट्टारक का नाम है। दूसरी बाजू में दिवाकरनन्दि सिद्धान्तदेव की निसिधि का उल्लेख है। तीसरी बाजू में कोण्डकुन्दान्वय के कई आचार्यों का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी ३३६

१२८

कोलनुपाक (नलगोण्डा, आन्ध्र)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

जैन मन्दिर में रखे एक स्तम्भ पर यह लेख है। श्रीपुष्पसेनदेव यह नाम इस में अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० बी १००

१२९

पूना (महाराष्ट्र)

लिपि–१२वीं सदी की, संस्कृत–कन्नड

नेमिचन्द्र यति द्वारा नेमिनाथमूर्ति की स्थापना का इस पादपीठ में लेख में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ पृ० ३५ शि० क्र० बी १५९

१३०

पेद्द तुम्बळम् (कुर्नूल, आन्ध्र)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। मूलसंघ–देशीगण–पोस्तकगच्छ–कोण्डकुन्द अन्वय के चन्द्रकीर्ति भट्टारक के शिष्य चॅचिसेट्टि की पत्नी बोचिकब्बे द्वारा गोम्मट पार्श्वजिन की स्थापना का इसमें वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५६-५७ पृ० ४३ शि० क्र० बी ४४

१३१-१३२-१३३-१३४

देवगढ़ (झांसी, उत्तरप्रदेश)

लिपि–११वीं-१२वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

ये लेख यहाँ के जैन मन्दिरों में मिले हैं। एक में शान्तिनाथ मन्दिर, राजा नल्लट तथा व्यापारी चक्रेश्वर के नाम अंकित हैं। यह श्लोकबद्ध है। दूसरा मन्दिर नं० १६ के पूर्व में एक शिला पर है। इसमे श्रीशुभ कीर्ति, माघनन्दि,—रचन्द्र, कामदेव, गांगेयनृप ये नाम पढ़े गये हैं।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० सी ४११, ४१६

यहीं के मन्दिर नं० १९ में इसी समय की लिपि में निम्नलिखित शब्द पाषाण खण्डों पर पढ़े गये हैं— १) बालचन्द्र निर्मित दानशाला २) संझरा पुत्र चन्द्रना ३) जयदेवः प्रणमति। मन्दिर नं० २४ में इसी समय की लिपि में यह लेख मिला है—भोणी प्रणमति।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० सी २०५-६

१३५-१३६-१३७

उखळद (परभणी, महाराष्ट्र)

सं० १२७२ = सन् १२१५, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर की तीन मूर्तियों के पादपीठों पर ये लेख हैं। माघ शु० ५ सं० १२७२ को मूलसंघ-सरस्वतीगच्छ के भ० धर्मचन्द्र ने ये मूर्तियाँ स्थापित की थीं। दूसरे लेख में राजा प्रतापदमनदेव का नाम भी है। तीसरे लेख में राजा रायहमीर देव का नाम है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २१० से २१२

१३८

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १२७२ = सन् १२१५, संस्कृत-नागरी

यहाँ की पहाड़ी पर मन्दिर नं० ५७ में रखी हुई मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में उक्त वर्ष तथा मूलसंघ–सरस्वती गच्छ के भ० धर्मचन्द्र का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ३७३

१३९

हुगरिटगे (गुलबर्गा, मैसूर)

शक ११४७ = सन् १२२४, कन्नड

आषाढ़ शु० ११ शुक्रवार शक ११४७ तारण संवत्सर के दिन मूल-संघ–देशीगण–पुस्तकगच्छ–गोमिनि अन्वय के आचार्य देवचन्द्र का समाधिमरण हुआ था। उन की स्मृति में बव्वर कलिसेट्टि ने यह लेख स्थापित किया था।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी ४६५

१४०

हिरेकोनति (धारवाड, मैसूर)

सन् १२४५, कन्नड

भाद्रपद शु० ३ रविवार विश्वावसु संवत्सर के दिन कल्याणकीर्ति भट्टारक के शिष्य बम्मय्य के समाधिमरण का यह स्मारक है। तिथि-वार व संवत्सरनामानुसार उक्त वर्ष बताया गया है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी २८२

१४१

अगरखेड (बीजापुर, मैसूर)

शक ११७० = सन् १२४८, कन्नड

यादव राजा कन्नर के राज्य में ज्येष्ठ पूर्णिमा शक ११७० कीलक संवत्सर के दिन चन्द्रग्रहण के अवसर पर देशी गण के आचार्यों को मिले हुए दान का इस लेख में वर्णन है।

(मूल कन्नड में मुद्रित)   सा० इ० इ० २० पृ० २६५

१४२

हिरेकोनति (धारवाड, मैसूर)

सन् १२७१, कन्नड

यादव राजा रामचन्द्र के राज्यवर्ष १२ में ज्येष्ठ व० ११ शुक्रवार प्रजापति संवत्सर के दिन अनंतकीर्ति भट्टारक की शिष्या सातिसेट्टि की पत्नी के समाधिमरण का यह स्मारक है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी २८०

१४३

हिरेकोनति (धारवाड, मैसूर)

सन् १२७८, कन्नड

यादव राजा रामचन्द्र के राज्य में चैत्र व० १० सोमवार वहुधान्य संवत्सर के दिन जिनभट्टारक के किसी शिष्य के समाधिमरण का यह स्मारक है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० वी २७९

१४४

सिरपुर (अकोला, महाराष्ट्र)

सं० १३३४ = सन् १२७८, संस्कृत-नागरी

इस ग्राम की सीमा पर स्थित पवळी मन्दिर नामक जिनालय के द्वार पर तीन पंक्तियों का यह लेख है। यह बहुत अस्पष्ट हुआ है। तथापि श्रीमाल वंश के ठ० राम, संघपति ठ० जगसीह तथा अंतरिक्ष श्री पार्श्वनाथ ये शब्द पढ़े जा सकते हैं। अकोला जिला गजेटियर (सन् १९१० में प्रकाशित) में डब्लू० हेग ने इस की तिथि संवत् १३३४ इस प्रकार दी है (उन्होंने इस का रूपान्तर सन् १४०६ दिया है वह कैसे इस का स्पष्टीकरण नहीं मिलता)। मूल लेख तथा उस के फोटो को देखकर सम्पादक ने यह विवरण जून १९६८ में अंकित किया था। अनेकान्त वर्ष २१ पृ० १६२ पर श्रीनेमचन्द डोणगांवकर ने इस लेख के वाचन का प्रयास किया है। उन्होंने लेख की तिथि शक १३३८ पढ़ी है।

१४५-१४६-१४७

चक्रनगर (इटावा, उत्तरप्रदेश)

सं० १३३५ = सन् १२७९, संस्कृत-नागरी

ये तीन लेख जिनमूर्तियों के पादपीठों पर हैं। फाल्गुन शु० ८ सोमवार सं १३३५ यह इन की तिथि है। मूलसंघ के गोलाराटक अन्वय के भोजदेव द्वारा इन मूर्तियों की स्थापना हुई थी। एक लेख में भोजदेव के साथ साधु कीकदेव का नाम भी है। तथा एक लेख में गोलाराडान्वय इस प्रकार उन की जाति का नाम लिखा है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ४८७-८९

१४८

सुतकोटि (धारवाड, मैसूर)

सन् १२८३, कन्नड

यादव राजा रामचन्द्र के राज्य के १४वें वर्ष में मार्गशीर्ष ब० ११ शुक्रवार, स्वर्भानु संवत्सर के दिन कत्तिय बोम्मिसेट्टि के पुत्र देवसेट्टि का समाधिमरण हुआ ऐसा इस लेख में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० बी ४२३

१४९

हथूंडी (जोधपुर, राजस्थान)

सं० १३४५ = सन् १२८८, संस्कृत-नागरी

इस लेख में उक्त वर्ष में साधु हेमाक द्वारा महावीर मन्दिर को प्रति-वर्ष २४ द्रम्म दान दिये जाने का वर्णन है। चाहमान राजा सम्वंतसिंघ का नाम भी अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० सी १७२७

१५०-१५१

हिरे अणजि (धारवाड, मैसूर)

शक १२१५=सन् १२९३, कन्नड

यादव राजा रामचन्द्र के राज्य में मार्गशिर व० (तिथि खण्डित) विजय संवत्सर, शक १२१५ के दिन एक वसदि को भूमि और धन के दान का इस लेख में वर्णन है। महाप्रधान सर्वाधिकारी परशुरामदेव का तथा रम्वादेवी के पुत्र कुमार हरिपिसेट्टि का नाम भी लेख में है। यह शिला कलमेश्वर मन्दिर में लगी है। यहीं के वीरभद्र मन्दिर में लगी एक शिला पर इसी वर्ष पौष मास के (तिथि खण्डित) सोमवार को उपर्युक्त हरिपिसेट्टि द्वारा तथा अन्य संघों द्वारा नेमिनाथ देव की पूजा के लिए कुछ धन दिये जाने का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी ४१९-२०

१५२

चित्तौड़ (राजस्थान)

सं० १३५७=सन् १३००, संस्कृत-नागरी

यह एक खण्डित लेख है। इस में धर्मचन्द्र तथा उन की गुरु परम्परा का तथा एक मानस्तम्भ की स्थापना का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ५१ शि० क्र० बी १०८

लेख का फोटो देखने से धर्मचन्द्र की गुरुपरम्परा का विवरण इस प्रकार मिला —

मूलसंघ–नन्दिसंघ–बलात्कारगण में कुन्दकुन्द आचार्य की परम्परा में केशवचन्द्र (ये तीन विद्याओं में विशारद थे तथा इन के एक सौ एक शिष्य थे)–देवचन्द्र–अभयकीर्ति–वसन्तकीर्ति–विशालकीर्ति–शुभ-

कीर्ति–धर्मचन्द्र । लेख में २५ पंक्तियाँ तथा २९ श्लोक हैं। इस की प्रथम पंक्ति में पुण्यसिंह का नाम भी पढ़ा जा सकता है।

१५३-१५४-१५५

चित्तौड (राजस्थान)

१३वीं सदी, संस्कृत-नागरी

अनेकान्त वर्ष २२ के प्रथम अंक में श्री रामवल्लभ सोमानी, जयपुर, ने चित्तौड के कीर्तिस्तम्भ के तीन लेख प्रकाशित किये हैं। तीनों में स्तम्भ के स्थापनाकर्ता साह जीजा तथा उन के वंश का विवरण प्राप्त होता है तथा इन में से पहले में उसी गुरुपरम्परा का वर्णन है जिस का ऊपर १५२वें लेख में उल्लेख आया है। अतः ये लेख भी तेरहवीं सदी के सिद्ध होते हैं। पहले लेख में ४५ श्लोक हैं। इस के प्रारम्भ में दीनाक तथा उन की पत्नी वाच्छी के पुत्र नाय द्वारा एक मन्दिर-निर्माण का वर्णन है। नाय की पत्नी नागश्री तथा पुत्र जीजू थे। इन्होंने चित्तौड़ में चन्द्रप्रभ मन्दिर का निर्माण कराया व खोट्टर नगर में भी एक मन्दिर बनवाया। इन के पुत्र पूर्णसिंह (इन का नाम पुण्यसिंह इस रूप में भी लिखा है) थे। इन के धन और दान की ४ श्लोकों में प्रशंसा की है। इन के गुरु विशालकीर्ति के शिष्य शुभकीर्ति के शिष्य धर्मचन्द्र (लेख में यह नाम खण्डित रूप में श्रीधर्मंव इतना पढ़ा गया है) थे। राजा हमीर ने उन का सम्मान किया था। उन के द्वारा मानस्तम्भ की प्रतिष्ठा का अन्तिम श्लोक में उल्लेख है। दूसरे लेख का मुख्य भाग स्याद्वाद की प्रशंसा में लिखा गया है। इस की आखिरी पंक्ति में बघेरवाल जाति के सा नाय के पुत्र जीजाक द्वारा स्तम्भ-निर्माण का उल्लेख है।* तीसरे

* इस लेख का सारांश रि० इ० ए० १९५४-५५ में (शि० क्र० ४९१) मिलता है। वहाँ जीजाक की जाति का नाम गलती से पेरवाल पढ़ा गया है।

लेख में संस्कृत निर्वाण भक्ति के १२ श्लोक दिये हैं तथा अन्तिम भाग में जीजा से युक्त संघ की मंगलकामना प्रकट की गयी है। नीचे तीनों लेखों का मूल पाठ दिया जा रहा है—

(अ)

सूनुस्तस्य तु दीनाको वाच्छीमार्यासमन्वितः।
अधः सू (क) रोति पूजायै पुरंदरस(श)चीरुचम् ॥२१॥

नायाख्यः सूनुरस्यासीत् नायका (को) धर्मकर्मणि।
अथवा न...............कर्मसु सर्द्ध (र्व) दा ॥२२॥

विशालकच्छकेतुच्छच्छायाछलध्वजव्रजैः।
निजप्रासादसौधाग्रनृत्यतुंगकरैरिव ॥२३॥

तत्र यः कारयामास...............।
मंदिरं सुंदरं रम्यकाम्यं सम्यक्त्ववे(चे)तसाम् ॥२४॥

स्वःसोपानोपदेशं द्रढयति च जिनः श्रीपदोत्कंठितानां
सोपानैर्मंडपोपि प्रकटयति ह....विवाहः।
उच्चैः प्रासादचंचत्कनकमयमहाकुंभशुंभद्ध्वजाग्रे-
रारूढा नृत्यतीव प्रभुपदजयिनी मानसी सिद्धिरस्य ॥२५॥

नागश्रीसंगतो देन.......... जडाग्नयः।
कालकूटान्वयोन्माथी यो वृषांकः कलौ युगे ॥२६॥

हाल्लजिजुस्तथा न्योट्टलसमभिधः श्रीकुमारस्थिराख्यः
षष्ठः श्रीए...पि विजयिनश्चक्रवर्ती भियस्तम्।
तेषां या(यो)जिजुनामाजनि जनिहननप्राणपोराणमार्ग्यः
प्रज्ञातिश्रीत्रिवर्गप्रभुरभवदसौ जैन [धर्मावलंबी] ॥२७॥

यश्चंद्रप्रभमुच्चकूटघटनं श्रीचित्रकूटे नटत्-
कोत्रस्पल्लवतालवीजनमरुप्रध्वस्तसुर्याश्रमे।

श्रीचैत्ये तलहट्टिका समघटी श्रीसादपीध्या ······
········वि जिनेश्वरस्य सदनं श्रीखोट्टरे सत्पुरे ॥२८॥
वूडाडोगरकेमघाच सुमिरौ जाने समारभ्य तन्-
मानस्तंभमहादिमं···मिदं निर्वर्त्य···सत्यं स य
सुमंगलाय जयिने श्रीपूर्णसिंहाय वै ।
गीर्वाणोदयिनीश्च यं समगम धर्मानुरागोल्वणः ॥३०॥
पुण्यसिंहोपि धर्मधुराधवलबृंहणः ।
जितारिः पितृसद्भारदत्तस्कंधो जयत्यसौ ॥३१॥
किंचिदारोपितस्कंधोभ्यासयोगाद्दिने दिने ।
विषमेधिवलो भूयो धवलः शवलोचनः ॥३२॥
अन्वयागतसद्धर्मभारधोरेयविक्रमः ।
अकिणांकदृथुस्कंधः पुण्यसिंहो महाद्भुतम् ॥३३॥
यत्पुण्यं निटले भाति भारतीचक्रमंडले ।
यत्कीर्तिस्त्रिजगत्सौधे धर्मलक्ष्मीर्मलांबुजे ॥३४॥
अपूर्वोयं धनी कश्चिद् यच्छन्नपि यदृच्छया ।
वर्द्धयत्यनिशं स्वं स्वं परं सत्पुण्यसंचयः ॥३५॥
उररीकृतनिर्वाहनिव सौम्यैव संपदः ।
स्थिराश्रयपदं भेजुस्तेजोक्रमित्तविग्रहाः ॥३६॥
पुण्यसिंहो जयत्येष दानिनां जनकुंजरः ।
यत्कीर्तिकामिनीनेत्रे कज्जलं भुवनांवरम् ॥३७॥
किं मेरुः कनकप्रभः किमु हरिर्गीर्वाण···प्रियः
किं सोमः सकलं चकार····पुण्योदयात् ।
पेयं धर्मधुराधरा(रो)विजयते श्रापूर्णसिंहः कलौ ॥३८॥
किं मेरुः किं नमेरुः किमुत सुरगुरुः किं हरिः किं मुरारिः
किं रुद्रः किं समुद्रः किमुत च विलसच्चंद्रिकाचंद्रचंद्रः ।

उन्नत्या स्वेष्टदत्त्या विमलतरधिया सद्धि भूत्या विमत्या
गोनीत्या रत्नभृत्या सकलतनुतयापूर्णसिंहः पृथिव्याम् ॥३९॥

ध्येयस्तस्य विशालकीर्तिमुनिपः सारस्वतश्रीलता-
कंदोच्छेदघनायमानवघनः स्याद्वादविद्यापतिः ।
वर्गत्यासगर्वचोविक्षोभविलसद्भोलिदोर्यस्यस
क्षोणीच्वत्समयास्तपोनिधिसावासौद्धरित्रीतले ॥४०॥

कताकांकार्छ(कं)श्यं कुसित परवादिद्विपमदं
क्व निः श्रीमत्प्रेमप्रचुररसनिस्यंदिकविता ।
उपन्यासप्राप्ते क्व च विहितवर्गव्यजनिता
मनोगम्यं रम्यं श्रुतमिह यदीयं विलसितम् ॥४१॥

योगानंगत्रिनेत्रस्त्रिभुवनरचनानूतनेपि त्रिनेत्रो
मीमांसावाग्निरोधप्रकटनदिनकृत् सांख्यमत्तेभसिंहः ।
उद्यद्बौद्धाहिदर्पस्फुरदुरुगरुडः प्रौढयाधीकशैल-
श्रेणीसंपातशंपाकलितवरवचोवर्णिनीवल्लभो यः ॥४२॥

तत्पुत्रः शुभकीर्तिरूर्जिततपोनुष्ठाननिष्ठापतिः
श्रीससारविकारकारणगुणस्तृप्यन्मनोदेवतः ।
प्रारब्धाय पदप्रयाणकलसत्पंचाक्षरोच्चारण-
पुत्यत्कीकृत निर्भवे हिमकक्षब्धत्समाध्याविधठः ॥४३॥

सिद्धांतोदधिवीचिवर्द्धनस्त्रद्वंद्रोचितंद्रोधुना
विख्यातोस्ति समग्रशुद्धचरितः श्रीधर्मव···यतिः ।
तत्कीर्तिः किल धोरवार्द्धिनृपतिश्रीनारसिंहादिह
स्त्रीकृत्य प्रकटीचकार सततं हमीरवीरोप्यसौ ॥४४॥

तच्चरणकमलमधुपे मानस्तंमप्रतिष्ठया मानम् ।
प्रकटीचकार भुवने धनिकः श्रीपूर्णसिंहोत्र ॥४५॥

(ब)*

···तिसायनसुधासंद्धावमंद्रोदय: ॥१॥
दुर्वारप्रतिपक्षशक्तिविभवन्यग्भावभंगाद्गत-
स्वव्यापारमनारतं यदव्र्··········पद
स्वाद्याकाररसानुरक्तिखचितं क्षोभभ्रमावर्तितं ।
चित्तक्षेत्रनियंत्रितं महदणुख्यात्यंकितं विघ्नित
स्यागादि·········तत्
कौटस्थ्यं प्रतिपद्य वंदथ सदासुद्धिं परां बिभ्रता ॥४॥
प्रत्येकार्पितसप्तभंग्युपहितैर्धमैरनंतैर्विधि-
····तद्रूपविद्रूपशश्वदनेहसा नवनवीभावं स्वसात्कुर्वता ।
भावान्निर्विशत: पराकृततृषो द्रेष्यानशेषा-
·······मचलस्वच्छप्रभंगे स्फुरन्
दूरं स्वैरमसंकरव्यतिकरं तिर्यङ् नलेतोर्ध्वतां ॥७॥
आकारैर्वियुतं युतं च····
····स्वमहसि स्वार्थप्रकाशात्मके
मज्जंतो निरुपाख्यमोघचिदचिन्मोक्षार्थितीर्थक्षिप: ।
कृत्वा नाद्य···
···स्थितिकृते स्वर्गापवर्गात्तये ।
य: प्राज्ञैरनुमीयते सुकृतिना जीजेन निर्मापित
स्तंभ: सै····
····सुमालोकैर्न कैरंच्यते ॥
बघेरवालजातीय सा: नाय सुत जीजाकेन
स्तंभ: कारापित: ॥शुभं भवतु॥

* इस लेखके फोटोसे हमने अनेकान्तमें प्रकाशित पाठमें आवश्यक सुधार किया है ।

(क)

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां निर्वाणभूमिरिह भारतवर्षजानाम् ।
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभिः संस्तोतुमुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या ॥१

कैलाशशैलशिखरे परिनिर्वृतोसौ शैलेशिभावमुपपद्य वृषो महात्मा ।
चंपापुरे च वसुपूज्यसुतः सुधीमान् सिद्धिं परामुपगतो गतरागबंधः ॥२॥

यत्प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः पापंडिभिश्च परमार्थगवेषशीलैः ।
नष्टाष्टकर्मसमये तदरिष्टनेमिः संप्राप्तवान् क्षितिधरे बृहदूर्जयंते ॥३॥

पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये ।
श्रीवर्धमानजिनदेव इति प्रतीतो निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा ॥४॥

शेषास्तु ये जिनवराहतमोहमल्ला ज्ञानार्कभूरिकिरणैरवभास्य लोकान् ।
स्थानं परं निरवधारितसौख्यनिष्ठं सम्मेदपर्वततले समवापुरीशाः ॥५॥

आद्यश्चतुर्दशदिनैर्विनिवृत्तयोगः षष्ठेन निष्ठितकृतिर्जिनवर्धमानः ।
शेषाविधूतघनकर्मनिबद्धपाशा मासेन ते यतिवरास्त्वभवन् वियोगाः ॥६॥

माल्यानि वाक्स्तुतिमयैः कुसुमैः सुदब्धान्यादायमानसकरैरभितः किरन्तः ।
पर्येम आदृतियुता भगवन्निषद्याः संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः ॥७॥

शत्रुंजये नगवरे दमितारिपक्षाः पंडोः सुताः परमनिर्वृतिमभ्युपेताः ।
तुंग्यां तु संगरहितो बलभद्रनामा नद्यास्तटे जितरिपुश्च सुवर्णभद्रः ॥८॥

द्रोणीमति प्रवरकुंडलमेढ्के च वैभारपर्वततले वरसिद्धकूटे ।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रिबलाहके च विंध्ये च पौदनपुरे वृषदीपके च ॥९॥
सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे दंडात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाताः स्थानानि तानि जगति प्रथितान्य-
भूवन् ॥१०॥

इक्षोर्विकाररसपृक्तगुणेन लोके पिष्टोधिकं मधुरतां समुपैति यद्वत् ।
तद्वच्च पुण्यपुरुषैरुषितानि नित्यं स्थानानि तानि जगतामिह पावनानि ॥११॥

इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृतिभूमिदेशाः ।
ते मे जिना जितभया मुनयश्च शांता दिश्यासुराशु सुगतिं निरवद्य-
सौख्याम् ॥१२॥

तेन सुवानंतजिने(श्वरा)णां मुनिगणानां च
(निर्वाण)स्थानानि निवृत्त्यै(वा)पांतु संघं जीजान्वितं सदा ॥

१५६-१५७

तवन्दी (स्तवनिधि) (बेलगांव, मैसूर)

लिपि–१३वीं सदी की, कन्नड

यहां जिन मूर्तियों के पादपीठों पर ये दो लेख हैं—

अ) पं० १) श्रीमतु द्रविळ संघद
२) सुपार्श्वदेवरु
ब) पं० १ श्री
२ मूळसंघ
३ बळात्कार
४ गणश्री

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ४९३-९४

१५८

भंकूर (गुलवर्गा, मैसूर)

लिपि–१३वीं सदी की, कन्नड

यह लेख जैन मन्दिर में तीन मूर्तियों के नीचे एक पादपीठ पर है जिस में श्रीकनककीर्ति इतने अक्षर ही पढ़े जा सकते हैं ।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ५१०

१५९

मडिकोण्ड (वरंगल, आन्ध्र)

लिपि–१३वीं सदी की, कन्नड-तेलुगु

यहां एक पहाडी पर छोटे से तालाव के पास एक चट्टान पर जिन-ब्रह्मयोगी ऐसा नाम खुदा है।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी १११
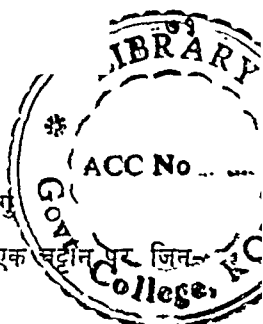
१६०

हिरेकोनति (धारवाड, मैसूर)

लिपि–१३वीं सदी की, कन्नड

इस समाधिमरण के स्मारक में आश्विज ५ सोमवार क्षय संवत्सर इस तिथि का तथा शान्तिभट्टारक एवं किसी व्रतीन्द्र का उल्लेख हुआ है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी २८१

१६१-१६२-१६३-१६४-१६५

अलदगेरि (धारवाड, मैसूर)

लिपि–१३वीं सदी की, कन्नड

ये पांच निषिधि लेख हैं। एक में आश्विन शु० (५) रविवार, पिंगल संवत्सर में महामण्डलाचार्य जयकीर्ति भट्टारक के शिष्य माणिकदेव के समाधिमरण का उल्लेख है। दूसरे में महामण्डलाचार्य बालचंद्र त्रैविद्यदेव के शिष्य मल्लय के समाधिमरण की तिथि आश्विन शु० ७ सोमवार, प्रभव संवत्सर ऐसी बतायी है। तीसरे में सूरस्थ गण-चित्रकूटान्वय के नागचन्द्र के शिष्य नन्दिभट्टारक का उल्लेख है। चौथे में सूरस्थ गण के

नन्दिभट्टारक के शिष्य नयकीर्ति मुनीन्द्र की शिष्या मायक्क के समाधि-मरण का उल्लेख है। पांचवें में नन्दिभट्टारक, नयकीर्ति भट्टारक की एक शिष्या तथा कनकप्रभ का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० ४० शि० क्र० बी २२२ से २२६

१६६

लिंगदेवरकोप (धारवाड, मैसूर)

लिपि—१३वीं सदी की, कन्नड

इस अधूरे लेख में आश्वयुज शु० १ श्रीमुख संवत्सर यह तिथि दी है तथा मूल संघ-सूरस्थ गण के नन्दिभट्टारक का नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ३०२

१६७

सुलतानपुर (पश्चिम खानदेश, महाराष्ट्र)

लिपि—१३वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

यह एक जिनमूर्ति के पादपीठ का लेख है। इस में स्थापक का नाम लाषण अंकित है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी २३२

१६८

केंभावी (गुलबर्गा, मैसूर)

लिपि—१३वीं सदी की, कन्नड

इस लेख में कोण्डकुन्दान्वय के मलधारि देव का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी ६४८

१६९

कुंदगोळ (मैसूर)

लिपि–१३वीं सदी की, कन्नड

जिनमूर्ति के पादपीठ के इस लेख में मूलसंघ यह नाम अंकित है।

सा० इ० इ० २० पृ० ३६४

१७०-१७१-१७२-१७३-१७४

देवगढ (झांसी, उत्तरप्रदेश)

लिपि–१२वीं-१३वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

ये लेख यहाँ के जैन मन्दिरों में मिले है। पहला मन्दिर नं० ७ में चरणपादुका के पास है तथा इस में गोलापुर के गोपाल का नाम अंकित है। दूसरा पार्श्वनाथ मूर्ति को स्थापना का वर्णन करता है तथा इस में माधवदेव के शिष्य प्राग्वाट घन्नाक के पुत्र गंगाक व शिवदेव के नाम अंकित हैं, यह मन्दिर नं० १२ में है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ५०३, ५१६

यहीं के मन्दिर नं० १४ के एक स्तम्भ लेख में मूल संघ कुंदकुंदाचार्यान्वय के केशवचंद्र, अभयकीर्ति तथा वसंतकीर्ति के नाम अंकित हैं (इन का समय बारहवीं-तेरहवीं सदी अनुमानित है)।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० सी ५१५

मन्दिर नं० १९ में प्राप्त एक अन्य लेख में (जो १३वीं सदी की लिपि में बताया गया है) कई पण्डितों द्वारा एक दानशाला के निर्माण का वर्णन है। यहाँ के दूसरे एक लेख में किसी गोष्ठी की चर्चा है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० सी ३०२-३

१७५-१७६-१७७

हिरेअणजि (धारवाड, मैसूर)

१३वीं सदी, कन्नड

ये तीन लेख समाधिमरण के स्मारक हैं। पहले में आषाढ़ शु० ११ सोमवार श्रीमुखसंवत्सर को किसी श्राविका के स्वर्गवास का उल्लेख है, उस समय के राजा का नाम यादव रामचन्द्र बताया है। दूसरे में किसी सेट्टि का नाम अंकित है। तीसरा अस्पष्ट हो गया है।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी ४२२-२४

१७८

बड़ौदा संग्रहालय (गुजरात)

सं० १३५७ = सन् १३०१, संस्कृत-नागरी

वैशाख व० ५ शुक्रवार सं० १३५७ को श्रीबाया की पत्नी लक्ष्मीदेवी के लिए लाखाक ने आदिनाथ मूर्ति की स्थापना की ऐसा इस लेख में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी० २९९

१७९

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १३८८ = सन् १३३१, संस्कृत-नागरी

यहां के मन्दिर नं० ७६ में रखी हुई एक पीतल की मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इसमें उक्त वर्ष तथा मूर्तिस्थापक साधु अभयदेव की पत्नी माल्ही के पुत्र केसो का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३९८

१८०

केंभावी (गुलवर्गा, मैसूर)

शक १२६२ = सन् १३४०, कन्नड

दोसिगरवावि नामक कुँए के पास यह लेख है। कार्तिक व० ३ मंगलवार शक १२६२ विक्रम संवत्सर के दिन मूलसंघ-सरस्वतीगच्छ-वलात्कारगण-कुंदकुंदान्वय के लोकचंद्र देव के समाधिमरण का यह स्मारक महादेवश्रेष्ठी के पुत्र ने स्थापित किया था।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी ६४७

१८१

केसवार (गुलवर्गा, मैसूर)

शक १३०७ = सन् १३८५, कन्नड

कुँवार देगुल नामक मन्दिर में लगी हुई शिला पर यह लेख है। चैत्र व० २ वुधवार शक १३०७ क्रोधन संवत्सर के दिन अमरकीर्ति के शिष्य माघनन्दि के शिष्य····मतिसेट्टि वैश्य द्वारा पार्श्वनाथ मन्दिर के जीर्णोद्धार का इसमें वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० वी ६२८

१८२

पानुगल्लु (महबूब नगर, आन्ध्र)

शक १३१९ = सन् १३९७, संस्कृत-तेलुगु

विजय नगर के राजा हरिहर (द्वितीय) के शासन काल में पौष शु० ११ रविवार, शक १३१९ ईश्वर संवत्सर के दिन इम्मडि वुक्क (इसे

द्विगुण बुक्क भी कहा गया है) द्वारा पानुगल्लु नगर तुरुष्क वीरों से जीत लिया गया ऐसा इसमें वर्णन है। हरिहर के मन्त्री बैच दण्डाधिप तथा बैच के पुत्र इरुगप की प्रशंसा में इस लेख में निम्नलिखित श्लोक हैं—

मंत्रश्रीजितदेवदानवगुरुः प्रख्यातधीवैभवः
शास्ता दुर्जनसंचयस्य महतामानन्दनानंदनः।
विश्वानंदितसद्गुणः समजनि श्रीबैचदंडाधिपः
तस्यामात्यवरो वरेण्यचरितश्चातुर्यसीमा विधेः॥
वीरश्रीवरणोचितं हरिहरक्षोणीपतिस्तत्सुतं
साम्राज्यप्रतिपालनापटुतरप्रज्ञाबलोदंचितं।
धीमानिरुगपमंत्रिवर्यमकरोद्दंडाधिनाथेश्वरं
विद्यावीर्यविवेकधैर्यकरुणासत्यक्षमालंकृतं॥

ए० इं० ३७ पृ० ५०

(लेख में वर्णित इम्मडि बुक्क को सम्पादक ने इरुगप का बन्धु माना है किन्तु उसे महीपति तथा उसके पुत्र अनन्त को क्षमापति कहा गया है अतः वह राजा हरिहर का ही बन्धु था ऐसा प्रतीत होता है। यहाँ वर्णित बैच तथा इरुगप का जैन शिलालेख संग्रह भाग १ तथा ३ में कई लेखों में वर्णन आ चुका है।)

१८३

तवन्दी (स्तवनिधि) (बेलगाँव, मैसूर)

शक १ (३) २२ = सन् १४००, संस्कृत-कन्नड

पार्श्वनाथ मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। चैत्र शु० १२ सोमवार शक १(३)२२ विक्रम संवत्सर के दिन लक्ष्मीसेन भट्टारक ने उक्त मूर्ति स्थापित की थी। मन्दिर का निर्माण मूलसंघ–देशियगण–पुस्तकगच्छ के

संवत्सर बतायी है। दूसरे में रविवार (तिथि खण्डित) धातु संवत्सर के दिन किसी श्राविका के स्वर्गवास का उल्लेख है। इसमें अणजे ग्राम व शान्तिनाथदेव के नाम भी हैं। तीसरे में जक्कले के पुत्र सोम के स्वर्गवास का उल्लेख है। चौथा लेख अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी ४२५ से ४२८

१९०-१९१

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

लिपि १४वीं सदी की, संस्कृत–नागरी

ये दो लेख मन्दिर नं० ७६ में स्थित मूर्तियों के पादपीठों पर हैं। एक में काष्ठासंघ, सं० तेजपाल की पत्नी हरिसिरि तथा पुत्र रावला के नाम हैं। रावला की पत्नी लाडा साहु नरपति की कन्या थी यह भी बताया गया है। दूसरा लेख अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२–६३ शि० क्र० बी ३९९, ४०१

१९२

आनेगोंदि (रायचूर, मैसूर)

सन् १४०२, संस्कृत–कन्नड़

इस लेख में राजा हरिहर के राज्यकाल में वैशाख शु० ३ सोमवार, चित्रभानु संवत्सर के दिन मंत्री वैच के पुत्र इरुगप दण्डनायक द्वारा कर्णाट मंडल के कुन्तल विषय में जिनमन्दिर के निर्माण का वर्णन है। उन के गुरु की परम्परा का भी वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी ६७८

१९३

जतारा (टीकमगढ, मध्यप्रदेश)

सं० १४७८ = सन् १४२१, संस्कृत–नागरी

नेमिनाथ मन्दिर की एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। मूलसंघ-बलात्कारगण-सरस्वतीगच्छ के किसी भट्टारक का इस में उल्लेख है। कार्तिक व. १४ सं० १४७८ यह इस की तिथि है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० सी १८९६

१९४

गोवा

शक १३४७–५५ = सन् १४२५–३३, संस्कृत–कन्नड

पुराने गोवा में सेंट फ्रांसिस द एसिसी की कन्वेन्ट के आँगन में पड़ी हुई शिला पर यह लेख है। विद्यानन्द स्वामी के शिष्य सिहनंद्याचार्य के शिष्य हरियण सूरि का भाद्रपद व० ७ बुधवार शक १३५४ परिधावी संवत्सर को समाधिमरण हुआ ऐसा इस में वर्णन है। सिहनंद्याचार्य के शिष्य मुनियण्ण को वन्दवड की नेमिनाथवस्ति के लिए आषाढ शु० १ शक १३४७ क्रोधि संवत्सर को वागुरुंवे ग्राम दान दिया गया था तथा कार्तिक शु० (१) शक १३५५ परिधावी संवत्सर को अक्षय नामक ग्राम दान दिया गया था। विजयनगर के राजा देवराय २ के अंतर्गत लक्कण्प के पुत्र त्रियंवक का गोवा पर उस समय शासन चल रहा था। लेख में यह भी कहा है कि वन्दवाडि ग्राम पुरातन समय में श्रीपाल राजा द्वारा वसाया गया था तथा वहाँ मंग दंड के पुत्र विरुगप ने नेमितीर्थंकर का मन्दिर वनवाया था। इस का जीर्णोद्धार सिहनंदि के उपदेश से किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० वी १९३

१९५-१९६

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १४९७ = सन् १४४०, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैन मूर्तियों के समीप ये दो लेख हैं तथा उक्त वर्ष में मूर्तिस्थापना का उल्लेख करते हैं।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५०४-५

१९७

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

सं० १४९९ = सन् १४४२, संस्कृत-नागरी

यह लेख जैन मन्दिर में रखी हुई एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस में आगे की ओर तीर्थंकर श्रीधर्मनाथदेव यह नाम है तथा पीछे उक्त वर्ष में मूलसंघ के भ० विद्यानंदि का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २१३

१९८

अलगूर (मैसूर)

शक (१३) ६६ = सन् १४४५, कन्नड

इस लेख में उक्त वर्ष में आदिनाथमूर्ति की स्थापना का वर्णन है।

सा० इ० इ० २० पृ० ३७८

१९९-२००

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५०५ = सन् १४४८, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैन मूर्ति के समीप यह लेख है। गोपगिरि में राजा डूंगरसिंह तोमर के राज्यकाल में इस मूर्ति की स्थापना का इस में वर्णन है। इसी वर्ष के यहीं के एक लेख में कीर्तिसिंह के राज्यकाल तथा गुणभद्र मुनि का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी १५०६, १५१०

२०१

केरवसे (दक्षिण कनडा, मैसूर)

शक १३७१ = सन् १४५०, कन्नड

केरवसे के वर्धमानस्वामी के मन्दिर में प्रतिदिन दीप जलाने के लिए संजरसेट्टि को कुछ भूमि और ५ बारकूर गद्याण दान दिया गया था। यह लेख श्रीकरण देवप्प सेनबोव के पुत्र पंडरिदेव सेनबोव ने लिखा था। यह हिरेबस्ति में रखी हुई एक शिला पर है। तत्कालीन शासक केरवसे व कारकल के वीरपाण्ड्य देवरस का नाम भी लेख में है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ६२९

२०२-२०३

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५१० = सन् १४५३, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैन मूर्तियों के समीप ये दो लेख हैं। उक्त वर्ष में मूर्ति-स्थापना का इन में निर्देश है। एक में गोपाचल में डूंगरेन्द्र के राज्य में

साधु माल्हा के पुत्र सं० देऊ के पुत्र सं० कर्मसीह तथा उस की बहिन साविरी का नाम अंकित है। दूसरे में काष्ठासंघ-माथुरान्वय के किसी पण्डित का तथा खेखा और हरिचन्द्र का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५०७-८

२०४

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५१४ = सन् १४५७, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैन मूर्ति के समीप के इस लेख में उक्त वर्ष में डोंगरसिंह के राज्य में मूलसंघबलात्कारगण के पद्मनन्दि तथा जिनचन्द्र भट्टारक के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५११

२०५

ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

सं० १५२२ = सन् १४६५, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैन मूर्ति के समीप के इस लेख में कीर्तिसिंह के राज्य में मूलसंघ-बलात्कार गण के पद्मनंदि देव का तथा ऊकेशान्वय के महीदेव का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५०९

२०६ से २१८

ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

सं० १५२५ = सन् १४६८, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैन मूर्तियों की उक्त वर्ष में स्थापना का निर्देश करने वाले १३ लेख मिले हैं। इन में एक में कीर्तिसिंह के राज्य में मूल संघ के गोलाराट वंश के किसी संघपति का नाम है। नौ लेखों में तिथि के अतिरिक्त अन्य विवरण अस्पष्ट है। ग्यारहवें लेख में क्षेमकीर्ति तथा हेमकीर्ति के नाम मिलते हैं। बारहवें में लेखक के रूप में चाटम के पुत्र चिद्रूप का नाम है। तेरहवें में सं० हेमराज का नाम मिलता है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५१२ से १५१६, १५२३-२४, १५२२ तथा १५२५

२१९-२२०

उखलद (परभणी महाराष्ट्र)

सं० १५२६-७ = सन् १४७०-१, संस्कृत-नागरी

ये दो लेख जैन मन्दिर में रखी हुई मूर्तियों के पादपीठों पर हैं। पहले में मूलसंघ के आचार्य सकलकीर्ति, भुवनकीर्ति, (धर्म) कीर्ति एवं हरदास का सं० १५२६ में उल्लेख है। यह शांतिनाथ की मूर्ति है। दूसरे लेख में सं० १५२७ में मूलसंघ-सरस्वतीगच्छ के भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति के पट्टशिष्य आचार्य विद्यानन्दि के उपदेश से सिंहपुर वंश के तेजा तथा उस की पत्नी तेजलदे द्वारा जिनबिंब स्थापना का वर्णन है। यह पीतल की चतुर्मुख मूर्ति है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २१४-५

२२१

ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

स० १५२७ = सन् १४७०, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैन मूर्ति के समीप का यह लेख है। उक्त वर्ष में मूलसंघ-बलात्कारगण-कुन्दकुन्दान्वय के किसी आचार्य ने यह मूर्ति स्थापित की थी ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५२६

२२२

देवगढ़ (झाँसी, उत्तर प्रदेश)

सं० १५२ (८) = सन् १४७१, सस्कृत-नागरी

यह सं० १५२(८) का मूर्तिलेख यहाँ के मन्दिर नं० ४ में मिला है। इसमें श्रीधनदेव का नाम मिलता है।

रि० इ० ए० १९५६-५७ शि० क्र० सी १३९

२२३-२२४

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५३१ = सन् १४७४, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैन मूर्तियों के समीप उक्त वर्ष के दो लेख मिलते हैं। एक में जिनचन्द्र, रत्नकीर्ति, पद्मनंदि तथा सिंहकीर्ति इन आचार्यों के नाम हैं एवं दूसरे में श्रीमत्परमगम्भीर आदि मंगलाचरण है, शेष अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५२७-२८

२२५

सतलखेडी (मन्दसौर, मध्यप्रदेश)

सं० १५२९ = सन् १४८३, संस्कृत-नागरी

यहाँ के जिनमन्दिर में यह लेख है। उक्त वर्ष मार्गशीर्ष व० ९ को सा० आहव के पुत्र संघवी (नाम खण्डित) द्वारा मन्दिर-निर्माण का इस में वर्णन है। सूत्रधार का नाम अर्जन बताया है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० सी १९७४

२२६

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १५४५ = सन् १४८९, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। उक्त वर्ष के अतिरिक्त अन्य विवरण अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३९४

२२७

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

सं० १५४८ = सन् १४९२, संस्कृत-नागरी

यहाँ जैन मन्दिर में उक्त वर्ष में स्थापित ४१ मूर्तियाँ हैं। इनके पादपीठ लेखों में प्रतिष्ठापक भ० जिनचन्द्र का नाम अंकित है। कुछ लेखों में अन्य नाम (स्थापनाकर्ता, राजा आदि) भी पाये जाते हैं।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २१७ से २५७

२२८

केरूर (बेलगाँव, मैसूर)

लिपि–१५वीं सदी की, कन्नड

जैन मन्दिर में पार्श्वनाथ मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इसमें निम्नलिखित ३ पंक्तियाँ हैं—

गुणभद्रदे(व)रु मूळ-
संघ सेनगण पिंगळ
संवत्सर—सेटि

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ४८७

२२९

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १५५८ = सन् १५०२, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस में उक्त वर्ष तथा मुणसिंघ, जराजचंद एवं जीतराज के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८४

२३०

केरवसे (दक्षिण कनडा, मैसूर)

शक १४३३ = सन् १५१०, कन्नड

रामुसालर द्वारा वर्धमानस्वामी को वैशाख शु० १० गुरुवार शक १४३३ प्रमोद संवत्सर के दिन कुछ दान दिये जाने का इस लेख में वर्णन है। यह लेख मूडवस्ति में रखी शिला पर है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ६२८

२३१

मंकी (उत्तर कनडा, मैसूर)

शक १४३७ = सन् १५१५, कन्नड

यह लेख इम्मडि देवराज के समय का चैत्र शु० ८ रविवार शक १४३७ भावसंवत्सर का है। पद्मप्रभदेव के शिष्य मल्लप्प हेग्गडे द्वारा निर्मित अनन्ततीर्थंकर बसदि तथा चौबीस तीर्थंकर बसदि का इस में उल्लेख है। उक्त तिथि को पहली बसदि को कुछ भूमि दान दी गयी थी।

रि० इ० ए० १९४०-४१ शि० क्र० ६२

२३२-२३३

खंवद्कोणे (दक्षिण कनडा, मैसूर)

शक १४३८ = सन् १५१५, कन्नड

इन दो लेखों के अनुसार विजय नगर के अधीन बारकूर राज्य के शासक रत्नप्प वोडेय के पुत्र विजयप्प वोडेय ने चन्द्रनाथ स्वामी के अमृतपडि उत्सव के लिए २० वराह गद्याण दान दिया था, तथा पेनुर्लंडि के वीरसेनदेवाचार्य को ६० वराह गद्याण दान दिया था। तिथि मार्गशिर शु० १५ धातु संवत्सर शक १४३८ ऐसी बतायी है। ये दो शिलाएँ कल्लुजोडमे नामक खेत में हैं।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ६२३-२४

२३४

मोळखोड (उत्तर कनडा, मैसूर)

शक १(४)३९ = सन् १५१६, कन्नड

यह लेख ज्येष्ठ शु० २ शनिवार शक १(४)३९ धातु संवत्सर का है। इस में देवरस द्वारा अंजुनायक को दिये गये विक्रय प्रमाणपत्र का वर्णन है तथा चौबीस तीर्थंकर बसदि को दिये गये कुछ दान का उल्लेख है।

क० रि० इ० १९४०-४१ शि० क्र० ६६

२३५

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५८० = सन् १५२३, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैनमूर्ति के समीप के उक्त वर्ष के लेख में ढलधारी के सूत्रधार तथा साधु कंसवल के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५२०

२३६

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १५८१ = सन् १५२४, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर नं० ७६ में रखी हुई एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। उक्त वर्ष के अतिरिक्त अन्य विवरण अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८५

२३७

आगरा (उत्तर प्रदेश)

सं० १५९९=सन १५४३, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक खण्डित जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। माघ शु० ५ बुधवार सं० १५९९ को वाथू तथा उसके परिवार ने इस मूर्ति की स्थापना की थी।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी ६०१

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ५१३ में भी सम्भवतः इसी लेख का वर्णन है यद्यपि यहाँ स्थापक का नाम नाथू तथा उदाई का पौत्र इस प्रकार अंकित है, तिथि वही है। इसके अनुसार यह पादपीठ प्रिन्सिपल, जैन कालेज, आगरा से प्राप्त हुआ था।

२३८–२३९

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १५९९=सन् १५४३, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ में रखी हुई दो मूर्तियों के पादपीठों पर ये लेख हैं। एक में उक्त वर्ष तथा काष्ठासंघ का उल्लेख है। दूसरे में उक्त वर्ष में काष्ठासंघ–पुष्करगण के भ० जससेन तथा (अग्र)वाल ज्ञाति के गर्ग-गोत्र के किसी गृहस्थ (नाम अस्पष्ट) का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८९, ३९१

२४०

जलोल्ली (उत्तर कनडा, मैसूर)

शक १४६७ = सन् १५४५, कन्नड

यह लेख माघ १३ रविवार शक १४६७ क्रोधी संवत्सर का है। गेरसोप्पे के कृष्ण भूपाल के राज्य में नागप्प सेट्टि द्वारा निर्मित पार्श्व-जिनालय का इस में वर्णन है।

क० रि० इ० १९४०-४१ शि० क्र० ७०

२४१

चक्रनगर (इटावा, उत्तर प्रदेश)

सं० १६१७ = सन् १५६०, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। ज्येष्ठ शु० ५ सं० १६१७ यह इस की तिथि है। इस में स्थापक के पिता का नाम मल्हा अंकित है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ४९०

२४२-२४३-२४४

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५०६ = सन् १५८४, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। फाल्गुन शु० २ शक १५०६ तारण संवत्सर यह स्थापना तिथि तथा मूलसंघ के भट्टारक धर्म-भूषण के शिष्य देवेन्द्रकीर्ति के शिष्य—कीर्ति के नाम का इस में उल्लेख है। यहीं की एक नेमिनाथमूर्ति के पादपीठ पर मूलसंघ सरस्वतीगच्छ–

बलात्कारगण के भ० धर्मचन्द्र–धर्मभूषण–देवेंद्रकीर्ति–अजितकीर्ति इन आचार्यों के नाम अंकित हैं, स्थापनातिथि नहीं है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २३३-७

यहीं के एक अन्य मूर्तिलेख में धर्मभूषण के शिष्य देवेन्द्रकीर्ति के उपदेश से गालाजी द्वारा पार्श्वनाथ की मूर्ति की स्थापना का वर्णन है, इस में तिथि नहीं है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २३३

२४५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १६४७ = सन् १५९०, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में उक्त वर्ष तथा भ० चन्द्रदेव का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३९५

२४६

दुदही (झाँसी, उत्तर प्रदेश)

सं० १६४८ = सन् १५९१, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर में एक शिला पर यह लेख है। वैशाख व० ५ रविवार सं० १६४८ यह इसकी तिथि है। भ० ललितकीर्ति तथा कुछ यात्रियों के नाम इस में अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ५१८

२४७-२४८

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

सं० १६(५)१=सन् १५९५, संस्कृत-नागरी

ये लेख जिनमूर्तियों के पादपीठों पर हैं। पहले में मूलसंघ के वादिभूषण भट्टारक का नाम अंकित है। दूसरे में सं० १६(५)१ में वादिभूषण के उपदेश से लखमा की पत्नी लखमादे द्वारा पार्श्वनाथ मूर्ति की स्थापना का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी० २६४, २५८

२४९

सोनागिरि (दतिया, मध्य प्रदेश)

लिपि १६वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० १३ की एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में कुंदकुंदान्वय तथा भुमनलाल ये नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी १३९

२५०

खंडेला (सीकर, राजस्थान)

सं० १६(६)१=सन् १६०४, संस्कृत-नागरी

इस लेख में मार्गशिर व० ५ गुरुवार सं० १६(६)१ के दिन शान्तिनाथ मन्दिर के निर्माण का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी ५९०

२५१

रेवासा (सीकर, राजस्थान)

सं० १६६१ = सन् १६०४, संस्कृत-नागरी

इस लेख में भ० जगकीर्ति के उपदेश से खंडेलवाल श्री कुम्भा द्वारा आदिनाथ मन्दिर में पद्मशिला की स्थापना का वर्णन है। कूर्मवंश के महाराज रायमल तथा मन्त्री देईदास के नाम भी अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी ५९३

२५२

सोनागिरि (दतिया, मध्य प्रदेश)

सं० १६६३ = सन् १६०६, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में उक्त स्थापनावर्ष तथा भ० यशोनिधि का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८६

२५३-२५४

रामपुरा (मन्दसौर, मध्य प्रदेश)

सं० १६६४ = सन् १६०७, संस्कृत-नागरी

१ ओं नमः सिद्धेभ्यः। संवत

२ १६६४ वर्षे वसाप्प [वैशाख] मास-

३ शुक्लपक्षसप्तम्यां गुरौ पुष [ष्य]-

४ नक्षत्रे एतस्मिन् दिने सं

५ गंइ श्रीनाथु तस्य पुत्र
६ सं जोगा तस्य पुत्र सं
७ जीवा तस्य पुत्र संग-
८ इ श्रीपदारथ पा [थु]
९ ज्ञाता वघेरवाल
१० गात्रं [तेन] सव्या वापा [पी] प्र-
११ तिष्ठा कृता सुम [शुभं]
१२ भवतु सत्रधरः (सूत्रधारः)
१३ राभा ॥श्रीः

दूसरा लेख

० (श्री) गणेशभारतीभ्यां नमः। नत्वा देवं विघ्नराजं गणेशं देवीं वाणीं दिव्यसिंहासनस्थां जीवासूनोर्द········(दशायां)········लोके (कल्पवृक्ष)····(॥१)····(श्रा)जितपादपद्माः ॥

२ (सम) स्तसंदर्शितमोक्षमार्गा विद्वत्प्रियं पान्तु पदार्थकं ते ॥२॥ सार्द्धद्वादशजातयो निगदिताः श्रेष्ठा विशां भूतले तन्मध्ये (प्र)थिता सुधर्मनिरता च········धर्मे स्वकीये स्थिता मिः

३ (थ्यास्थावि) निवर्जितातिनिपुणाः पण्ये स्थितानां शुभे ॥३॥ नेत्रबाणेषु गोत्रेषु श्रेष्ठिगोत्रं शुभं मतं। तस्मिन् पदार्थको जातः सर्वगोत्रप्रकाशकः ॥४॥ त ·······(प्र) दानाधिगतप्रतीतिः ॥

४ (व्या) पारदक्षो निजबंधुमुख्यः नाथू धनाढ्यः प्रथितः पृथिव्यां ॥५॥ तस्यात्मजोभूत्सु (हृदास)····रत्नाकराच्छीतकरः कलाढ्यः। यथा जनानंद (करः) ·· ····(मुदग्र) कीर्तिः ॥६॥ आमंददुर्गा—

५ धिपतिं प्रजानां दूरीकृताधिं सुनयेन दक्षं । प्रभुं गुणाढ्यं समवाप्य शश्वद् धर्मार्थकामान् बुभुजेधिकश्रीः ॥७॥ अचलः किल यो (ग) संज्ञिकं ....अधिकारिपदे नियुक्त—

६ (वान्) निजकार्यक्षम (तां च) पाटवं ॥८॥ गूर्जरदेशाधिपतिः शकपो यं प्राप्य मेदपाटमधिस्थं । गतभीः पालयमानः शरणं यत्प्रतापसंज्ञिकं कृतवान् ॥९॥....नीयः सुगुणाभिरामः यो

७ ....दशलक्षणेभूत् कृतप्रयत्नो निजधर्ममुख्ये ॥१०॥ दयापरः सत्यपरः कृतार्थः सत्पात्रदानेन सुगीतकीर्तिः । चैत्यालयं सद्गुरु-भक्तियुक्तो....॥११॥ जीवाभिधस्तत्तनयो

८ (ब) भूव स्वकीयधर्मेषु दृढप्रतीतिः । दयार्द्रभावो गुरुदेवभक्तो वंशाग्रणीर्बुद्धिमतां वरिष्ठः ॥१२॥ चैत्यालये वृद्धिकरं स्वकीये सदा शुभध्यानविधूतमोहं ।....रिकं भव्यगुणं चकार ॥१३॥

९ तदा श्रमात् प्राप्तसमस्तकामश्चतुर्विधं दानमदाद्यतिभ्यः । सत्पात्र-दानेन कृपायुतेन प्राप्नोति लोके पदवीं च गुर्वीं ॥१४॥ तस्यात्मजौ द्वौ विनयोपपन्नौ ...ज्यायान् पदार्थोनुजनिश्च

१० नाथू दीर्घायुषौ तौ भवतां भवेस्मिन् ॥१५॥ श्रीमद्दुर्गनरेशस्य कृतैकसुकृतस्य च । वर्ण्यते तस्य राज्यं हि रामराज्योपमं शुभं ॥१६॥ ॥ श्रीमत्प्रतापसूनौ दुर्गनृपे भूपतिप्रवरे ।... कुर्वंति ज्ञात्वा...पुण्यकारिणो मनुजाः ॥१७॥

११ श्रीदुर्गभानुः किल पुत्रपौत्रैर्जीव्यात् सहस्रं शरदां नरेन्द्रः । पतिं यमासाद्य नरेन्द्ररत्नं राजन्वती भूमिरियं विभाति ॥१८॥ दूषणारिपुरपः कृतवान् यो यज्ञदानानिव(है)निजकीर्तिं । सा... लोकगतिं वा अर्गलाविरहितां

१२ विपुलं वित् ॥१९॥ निजस्वामिपुरे रम्ये श्रीमद् दुर्गनरेश्वरः । शुभं सरोवरं चक्रे सर्वलोकसुखावहं ॥२०॥ नयेन जित्वा नृपतीन् बलाढ्यो नतांश्च चक्रे वशवर्तिनस्तान् । दिगंतराजांश्च दुराशयान् यो····देशान् विगतप्रभावान् ॥२१॥

१३ पद्माकरं कारितवान् हि प्राच्यां दिश्युज्जयिन्यां बहुसत्त्वजुष्टं । बध्वा नदीं पिंगलिकां धनानि श्रीदुर्गभानुर्वितरन् बहूनि ॥२२॥ कलत्रपुत्रद्विजवर्यसंघैरुपेत्य तां पुण्यपिशाचमोक्षे । अचीकरद् दुर्गनृपस्तुलां यो हिर—

१४ ण्यदानं बहु चान्नदानं ॥२३॥ श्रीदुर्गभूपः किल दक्षिणस्थं सोहिल्लकं वारणदुर्निवारं । जित्वाहवे सैन्यपतींश्च हत्वा दिल्ली-श्वरं कीर्तिपरं चकार ॥२४॥ गूर्जरदेशाधिपतिः सुदुष्करः स्वं जयं ध्रुवं मेने । वि–

१५ लोक्य दुर्गनृपतेर्नाशीरं गजपुरस्सरं मग्नः ॥२५॥ गोसहस्रमहा-दानं विधिवद्दीनवल्लभः । दूषणारिपुरे दुर्गो ददौ कल्पद्रुमोपमः ॥२६॥ मधोः पुरीं प्राप्य जगत्पवित्रां सूर्योपरागे हि ददौ महान्ति । दानानि चान्यानि त्रयो–

१६ दशानि श्रीदुर्गभूपो द्विजपुंगवेभ्यः ॥२७॥ क्षात्रं दयालुतां दानं विनयं धर्मरक्षणं । विज्ञानं विष्णुभक्तिं च वर्णितुं तस्य कः क्षमः ॥२८॥ तस्य प्रमोदुर्गनराधिपस्य मान्याग्रणीर्ग्राह्यगुणो वदान्यः । परोपकारेऽज—

१७ निधिः पदार्थः प्रीत्या जनानंदकरः कृपालुः ॥२९॥ दयया दानमानाभ्यां नयेन प्रश्रयेण च । पदार्थः प्राप्तसंकल्पः सर्वलोक-प्रियोभवत् ॥३०॥ (कृ)त्वाधिकारं विपुले भने स्वे सेवापरं दुर्गनृपः पदार्थं । दिल्ली-

१८ श्वरात्प्राप्तनिजोरुमानो देशाननेकान् बुभुजे तदात्तान् ॥२१॥
विश्रामभूमिः किल सज्जनानां पदारथः पुण्यनिधिः गुणज्ञः ।
समाश्रिताः सत्फलमाप्नुवन्ति निदाघतप्ता इव कल्पवृक्षं ॥२२॥
विविधमंत्रप—

१९ टुं हि पदार्थकं सकलकार्यधुराधरणक्षमं । हृदि विचिंत्य सुधानि-
धिसंज्ञिकः सकलमंत्रिजनेष्करोद् विभुं ॥२३॥ श्रीमद्दुर्गनरेश्वरस्य
तनयश्चन्द्रान्वयद्योतकश्चन्द्रः क्षात्रगुणान्वितो निजजनानंदप्रदः
कांतिमान् ।

२० संग्रामे तुरतीं विजित्य सहसा म्लेच्छाधिपं दुस्सहं नीत्वा
दुंदुभिवाजिराजिमतनोत् कीर्तिं जगद्विश्रुतां ॥२४॥ दिशि
मंद्रायते यस्यां भानोर्भानुसहस्रकं । तस्यामेव तु चन्द्रेण
प्रतापैररयो जि—

२१ ताः ॥२५॥ समरभूमिगतः सुतरां बभौ नृपतिपूजितदुर्गतनूद्भवः ।
यव(न)सैन्यपतीनहनत् परान् विजयिवीरकुमारसमप्रभः
॥२६॥ ईदृग्-विधाच्चन्द्रसतोधिकारं लब्ध्वा वितेने विपुलं
यशः स्वं । देवा (ल)—

२२ यं तीर्थकृतां च भक्तिं कुर्वन् पदार्थो दयया च दानं ॥२७॥
देवोत्सवं तस्य जिनालयस्य द्रष्टुं प्रतिष्ठावसरे हि संघः ।
सन्मानभोज्याद्यदुकूलवस्त्रैः समर्पितः सद्वचनैरिहाप्तः ॥२८॥
रथं विधायामर (या)—

२३ ····रूपं तत्रोपविश्यार्यजनैः पदार्थः । दानं ददत् पौरजनैः सहर्षैः
शनैर्ययौ दुर्गसरःसमीपे ॥३०॥ यात्रां विधायाशु जलस्य
दत्वा वस्त्राण्यनंतानि सुवासिनीभ्यः । पूगीफलानां निचयं
जनेभ्यो—

२४ ····तिं प्राविशदालयं स्वं ॥४०॥ घस्राष्टकं वर्णचतुष्टयेभ्यः प्रीत्या ददन्नित्यमवारितान्नं । कृत्वा शुभं मंडपमत्र होमं संपूज्य संघं विससर्ज पूर्णं ॥४१॥ जीवासूनुरकारयन्निजकुले भास्वत्—

२५ ····रथ्यासौधशतां गवाक्षरुचिरां शस्ताकृतिं दीर्घिकां । दूरादागतशर्मदां दृढशिलाबद्धां पुरात् पश्चिमे पूर्णां शीतजलेन भव्यरचनासोपानपंक्त्यन्वितां ॥४२॥ श्रीमद्विक्रमभूमिपस्य समयात् ष—

२६ ····न्मिते मासे राधसि वत्सरे गुरुयुते भास्वत्तिथौ चोज्वले । विप्रान् वेदविदः सुवर्ण····वस्त्रादिभिस्तोषयन् पूर्णीकृत्य सुदीर्घिकां च वितरन् वित्तं पदार्थोधिकं ॥४३॥ पेतासूनुः सूत्रधा (र)—

२७ (श्चकार) शस्ताकारां दीर्घिकां रामदासः । शिल्पं तस्या वीक्ष्य शिल्पी मनोज्ञं कश्चि (च्चित्ते नादधात् शिल्प) गर्वं ॥४४॥ भारद्वाजकुलोद्भवो (द्विजवरः) श्रीकेशवः पुण्यकृत् वेदव्याकरणागमार्थवि (द)—

२८ ····नः सुधि····॥४५॥····पारगः सुचरितो कौसल्यगोत्रे भवद् दे (व)—

२९ ····सौगतधर्मवेत्ता । स्वे····

३० ····(शोभावहां) ॥ यस्य····

उपर्युक्त दो लेखों में से पहला एक स्तम्भ पर तथा दूसरा एक सीढ़ीदार कुँए की दीवाल में लगी हुई शिला पर है। दोनों में बघेरवाल जाति के श्रेष्ठिगोत्र के संगई नाथू के पुत्र जोगा के पुत्र जीवा के पुत्र पदार्थ द्वारा इस कुँए के निर्माण का वर्णन है। इस के शिल्पकार का नाम रामा या रामदास बताया है। दूसरे लेख में नाथू के पुत्र जोगा का नामान्तर योग बताया है तथा अचल ने* उसे अधिकारिपद दिया ऐसा कहा है। मेवाड़ की सीमा पर योग की गुजरात के शकप (मुसलमान राजा) से मुठभेड़ हुई थी। योग ने दशलक्षण धर्म की साधना की तथा एक जिनमन्दिर बनवाया। उस के पुत्र जीवा के दान की और गुणों की बड़ी प्रशंसा की है। जीवा के पुत्र पदार्थ और नाथू हुए। इस के बाद राजा दुर्गभानु और उस के पुत्र चन्द्र की विस्तृत प्रशंसा है। दुर्ग ने अपने नगर में एक सरोवर बनवाया था। उज्जयिनी के पूर्व में पिंगलिका नदी पर बांध बनवाया था तथा पिशाचमोक्ष तीर्थ पर तुलादान किया था। दिल्ली के बादशाह अकबर की ओर से गुजरात के सुलतान से लड़ कर अहिल्लक क़िला जीता था तथा एक हज़ार गायें दान दी थीं। मथुरा की यात्रा कर बहुत से दान दिये थे। इस दुर्गराज ने पदार्थ को अपना मन्त्री नियुक्त किया था। दुर्ग के पुत्र चन्द्र ने पदार्थ को मुख्य मन्त्री बनाया। तदनन्तर पदार्थ द्वारा की गयी यात्रा, दान, होम, पूजा आदि गतिविधियों की चर्चा है तथा इस कुँए का निर्माण पूरा होने का वर्णन है। यह कुँआ अभी भी पाथू शाह की बावड़ी कहलाता है (पाथू का ही संस्कृत में पदार्थ यह रूप प्रयुक्त किया गया है)।

ए० इं० ३६, पृ० १२१-३०

---

* ये रामपुरा के चन्द्रावत राजा अचलदास थे। इन के पुत्र प्रतापसिंह तथा प्रतापसिंह के पुत्र दुर्गभानु हुए।

२५५

पैरिस संग्रहालय (मूल स्थान अज्ञात)

सं० १६६६ = सन् १६१०, संस्कृत-नागरी

पैरिस के म्यूजी गिमे से प्राप्त एक फोटोग्राफ क्र० एम जी २१०८८ में काँसे की जिनमूर्ति दिखायी गयी है जो उक्त वर्ष में स्थापित की गयी थी।

रि० इ० ए० १९५६-५७ शि० क्र० बी ५४४

२५६–२५७

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

सं० १६६९ = सन् १६१२ तथा शक १५३८ = सन् १६१६

संस्कृत-नागरी

इस लेख में काष्ठासंघ के भट्टारक जसकीर्ति द्वारा फाल्गुन व. (१०) गुरुवार सं० १६६९ में एक जिनमूर्ति की स्थापना का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २५९

यहीं के एक अन्य मूर्तिलेख में फाल्गुन व. २ शक १५३८ नल संवत्सर यह स्थापना की तिथि तथा बलात्कारगण सरस्वतीगच्छ के विशालकीर्ति का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २६८

२५८

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १६७० = सन् १६१४, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ५७ में स्थित पार्श्वनाथमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में पुष्करगच्छ-ऋषभसेनगणधरान्वय के भ० विजयसेन के शिष्य भ० लक्ष्मीसेन तथा रावतचंद व उस की पत्नी केसरबाई के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३७४

२५९

राणोद (शिवपुरी, मध्यप्रदेश)

सं० १६७४ = सन् १६१८, संस्कृत-नागरी

बाराखम्भा नामक स्तम्भ पर यह लेख है। इस में मूलसंघ-सरस्वतीगच्छ के जसकीर्ति व ललितकीर्ति का उल्लेख है। जहाँगीर के राज्य का भी उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५९७

२६०–२६१–२६२

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५४१ = सन् १६२०, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर में स्थित मूर्तियों के पादपीठों पर ये लेख हैं। एक लेख में उक्त वर्ष में प्रतिष्ठापक विशालकीर्ति का नाम अंकित है। दूसरे लेख

में भी उक्त वर्ष में विशालकीर्ति का नाम है, साथ ही उन की परम्परा मूलसंघ-बलात्कारगण-सरस्वतीगच्छ-कुन्दकुन्दाचार्यान्वय का उल्लेख भी है। तीसरे लेख में भी उक्त समय तथा उन्हीं का नाम अंकित है, साथ में उन के गुरु का नाम देवेन्द्रकीर्ति बताया है तथा इस मूर्ति की स्थापना कोंकण से आये हुए नागश्रेष्ठि की ओर से की गयी थी ऐसा बताया है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २१६ ,२६९, २७०

२६३–२६४

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५४५ = सन् १६२३, संस्कृत-नागरी

यह लेख पीतल की एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। इस में उक्त वर्ष में महाताजी व.उन की पत्नी जीवाईका नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २७१

यहीं के इसी वर्ष के एक अन्य लेख में ज्येष्ठ शु० १४ शक १५४५ सं० १६८० रुधिरोद्गारी संवत्सर यह स्थापना तिथि तथा मूलसंघ के भ० गुणभद्र के शिष्य शरवण की पत्नी सान का का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी २७६

२६५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १६८(०) = सन् १६२४, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस में ओर्छा के बुन्देल राजा वीरसिंघदेव के पुत्र जुगराज के राज्य में

ललितकीर्ति के शिष्य धर्मकीर्ति के उपदेश से जगजीवन द्वारा इस मूर्ति की स्थापना का वर्णन है। संवत् निर्देश में अन्तिम अंक अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३९०

२६६

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७०१ = सन् १६४४, संस्कृत-नागरी

१ ब्र० श्री मंगलदासनी पादुका

२ मंडलाचार्य श्री केशवसेनगुरुभ्यो नमः पादुका

३ मं० श्रीविश्वकीर्तिनी पादुका

४ सं० १७०१ वर्षे ज्येष्ठमासे कृष्ण···

काष्ठासंघे नंदीतटगच्छे विद्यागणे भ० श्रीरामसेनान्वये तदनुक्रमे
भ० श्रीरत्नभूषण तत्सिष्य····
भ० श्रीविश्वकीर्ति नित्यं प्रणमति

सोनागिरि पहाड़ी पर मन्दिर क्र० ३४ के सामने एक छोटी सी छत्री में तीन चरण पादुकाएँ स्थापित हैं जिन पर उपर्युक्त संक्षिप्त लेख खुदे हैं। तात्पर्य मूल लेखों से स्पष्ट ही है। यह विवरण ता० ६-६-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के समय अंकित किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३६३ में भी इस का सारांश मिलता है।

२६७-२६८

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५६६ तथा १५७६ = सन् १६४४ तथा १६५४, संस्कृत-नागरी

यह लेख नेमिनाथमूर्ति के पादपीठ पर है। इस में मूलसंघ के भट्टारक धर्मचन्द्र—धर्मभूषण—विशालकीर्ति—अजितकीर्ति इन आचार्यों की परम्परा बतायी है। मूर्ति की स्थापना अजितकीर्ति के शिष्य तुकश्रेष्ठी ने शक १५७६ जय संवत्सर में की थी।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २७३

यहीं के एक अन्य मूर्तिलेख में शक १५६(६) यह स्थापनावर्ष तथा मूलसंघ के अजितकीर्ति का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी २७७

२६९

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७०७ = सन् १६५१, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में उक्त वर्ष में भ० विश्वभूषण के उपदेश से वत्सगोत्र के पदमसी के पुत्र श्यामदास द्वारा पार्श्वनाथमूर्ति की स्थापना का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८३

२७०

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५८९ = सन् १६६७, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है । वैशाख शु० ५ शक १५८९ प्लवंग संवत्सर यह स्थापनातिथि तथा मूलसंघ यह शब्द इस में अंकित है ।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २७४

२७१

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७४५ = सन् १६८८, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर नं० १७ में स्थित एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है । उक्त स्थापनावर्ष के अतिरिक्त इस का अन्य विवरण प्राप्त नहीं है ।

रि इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी १४१

२७२

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७४७ = सन् १६९० संस्कृत-नागरी

श्रीश्रमणाचलस्थचंद्रप्रभाय नमः संवत्सरे १७४७ श्रावणशुक्ल ८ श्रीमहाराजकोमार श्रीदिमान छत्रसालजूदेव श्रीमहाराजकोमार श्रीराजा उदीत सिंहजू देव राज्योदये सेवाधिष्ठित श्रीगोपालमणिजू तत्समए श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदान्वये श्रीभट्टारकजिच्छ्री-

जगद्भूषणजू देव तत्पट्टे श्रीमट्टारकविश्वभूषणदेवेन मंदिरनिर्मापणं कृतं श्रीरस्तु श्रीकल्यानमस्तु श्री

जै कोई वांचै तिनकौ धर्मवृद्धि होय

उपर्युक्त लेख सोनागिरि की तलहटी के मन्दिर क्र० ९ के प्रवेश-द्वार पर लगी हुई शिलापट्टिका पर खुदा है। तात्पर्य मूल लेख से स्पष्ट ही है। यह विवरण ता० ६-६-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर अंकित किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४०८ में भी इस का सारांश मिलता है।

२७३

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १६२२ = सन् १७००, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। फाल्गुन ब० ३ शक १६२२ विक्रम संवत्सर यह स्थापनातिथि तथा मूलसंघ यह शब्द इस में अंकित है।

र इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २७५

२७४ से २७८

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७६० से १८३६ = सन् १७०४ से १७८०, संस्कृत-नागरी

ये पांच लेख यहां के विभिन्न मन्दिरों में प्राप्त हुए हैं। इन का विवरण इस प्रकार है—

(१) यह लेख मन्दिर नं० ५१ में है। इस में सं० १७६० में धर्मनाथ मन्दिर की प्रतिष्ठा का वर्णन है। यह मन्दिर मणीराम व

रुक्मावती के पुत्र लाला वासुदेव ने बनवाया था। प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में भ० कुमारसेन व देवसेन के नाम भी अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी० ३६८

(२) यह लेख मन्दिर नं० ४६ में है। इस मन्दिर का निर्माण मूलसंघबलात्कारगण के भ० वसुदेवकीर्ति के उपदेश से पं० बालकृष्ण द्वारा सं० १८१२ में किया गया था।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३६६

(३) यह लेख मन्दिर नं० १५ में है। दतिया के बुन्देल राजा शत्रुजीत के राज्य में इस मन्दिर का निर्माण हुआ था। इस में तीन तिथियाँ दी हैं—सं० १८१९ में नींव खोदी गयी, सं० १८२५ में प्रतिष्ठा हुई थी तथा पूरा काम सं० १८८३ में पूर्ण हुआ था। लेख में भ० महेन्द्रभूषण, जिनेन्द्रभूषण व आ० देवेन्द्रकीर्ति के नाम भी उल्लिखित हैं। निर्माणकार्य घोम्हानगर के शिल्पकार मटरू ने सम्पन्न किया था।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ४१३

(४) यह लेख मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। इस में स्थापना वर्ष सं० १८२८ तथा स्थापक देवेश का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३८२

(५) यह लेख मन्दिर नं० ५० में है। बुन्देलखण्ड में दिलीपनगर (दतिया) के राजा इन्द्रजीत के पुत्र छत्रजीत के राज्य में नोरोंदा निवासी बोटेराम ने भ० देवेन्द्रभूषण के उपदेश से सं० १८३६ में एक जिनमूर्ति स्थापित की ऐसा इस में कहा गया है। मूर्ति के शिल्पकार का नाम घासी था।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३६७

२७९

सेमनवाड़ी (बेलगाँव, मैसूर)

शक १७१५ = सन् १७९३, कन्नड

कार्तिक शु० ४ गुरुवार शक १७१५ प्रमादि संवत्सर। इस तिथि के इस लेख में जिनसेनभट्टारक का नाम दिया है। जिनमन्दिर के गोपुर में रखी हुई मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी ३५०

२८०

कोरोची (कोल्हापुर, महाराष्ट्र)

संस्कृत-कन्नड़

शक १७२० तथा १७४२ = सन् १७९८ तथा १८२०

रायप्प व बन्धु रेचप्प द्वारा एक जिनमन्दिर के निर्माण व पार्श्वनाथ-मूर्ति की स्थापना का इस लेख में वर्णन है। इस में दो शकवर्ष बताये हैं--१७२० तथा १७४२।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ७७८

२८१ से २८४

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १८५५ = सन् १७९९, संस्कृत-नागरी

उक्त वर्ष के ये चार लेख यहाँ के विभिन्न मन्दिरों में प्राप्त हुए हैं। इन का विवरण इस प्रकार है--

(१) मन्दिर नं० ४ व ५ के बीच चौबीस तीर्थंकरों के चरणों का एक शिलांकित पट है उस पर यह लेख है। इस में भ० राजेन्द्रभूषण के बन्धु सुरेन्द्रकीर्ति की शिष्या वसुमती का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३६०

(२) यह लेख मन्दिर नं० ५८ में है। दतिया के राजा छत्रजीत के राज्यकाल में बलवन्तनगर निवासी परमानन्द व प्रतापकुंवरि के पुत्र लाला देवकीनन्दन, भगवानदास, मुकुन्दलाल व रामप्रसाद द्वारा आदिनाथ, पार्श्वनाथ व महावीर के मन्दिरों का निर्माण किया गया था। प्रतिष्ठा भ० महेन्द्रकीर्ति द्वारा सम्पन्न हुई थी।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३७५

(३) यह लेख मन्दिर नं० ९ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस में भ० जिनेन्द्रभूषण के पट्टधर भ० महेन्द्रभूषण तथा ब्र० हर्षसागर के नाम अंकित हैं।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ४०५

(४) यह लेख मन्दिर नं० ८ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस में मूलसंघ बलात्कारगण के भ० जिनेन्द्रभूषण व महेन्द्रभूषण के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी० १३७

२८५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १८६८ = सन् १८११, संस्कृत-हिन्दी-नागरी

श्रीमच्चन्द्रप्रभाय नमो नमः। संवत् १८६८ मिती माघ सुदि ५ श्रीमहाराजाधिराज श्रीरावराजा पारीछत बहादुरजूदेवस्य राज्योदये

श्रीमूलसंघे वलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्यान्वये श्रीगोपाच-लपट्टे भट्टारकजी श्रीविश्वभूषणजी तत्पट्टे श्रीसुरेंद्रभूषणजी तत्पट्टे श्री-लक्ष्मीभूषणजी तत्पट्टे श्रीमुनींद्रभूषणजी तत्पट्टे श्रीदेवेंद्रभूषणजी तत्पट्टे श्रीनरेंद्रभूषणजी तत्पट्टे श्रीसुरेंद्रभूषण विद्यमाने श्रीभट्टारक देवेंद्रभूषणस्य गुरुभ्राता मंडलाचार्यजी श्रीविजयकीर्तिजी तेन मंदिरजीर्णोद्धारेण पुनर्नि-र्मापणं कृतं तत्सिष्यो पंडित परमसुखजी पंडित भागीरथजी चि० हीरानंद मेघराजादि मंदिरस्य नित्यं सेवां कुर्वंतु श्रीरस्तु श्रीकल्याणमस्तु अपरं च १८६३ की सालमै तौ मंदिर की नीम लगी अर संवत १८६६ की सालमै रथयात्रा प्राणप्रतिष्ठा भई अर सं० १८६८ की सालमै मंदिर पूर्ण वनि गओ जै कोइ वाचै तिनिकौ धर्मवृद्धि आशीर्वाद यथायोग्यम् श्री श्री श्री श्री श्री

उपर्युक्त लेख सोनागिरि की तलहटी के मन्दिर क्र० ९ के द्वार पर लगी हुई शिलापट्टिका पर खुदा है। संवत् १८६३ से १८६८ तक राव-राजा पारीछत (परीक्षित) वहादुर के राज्यकाल में भट्टारक सुरेन्द्रभूषण के कार्यकाल में आचार्य विजयकीर्ति द्वारा इस मन्दिर का जीर्णोद्धार किया गया था। उन के शिष्य पण्डित परमसुख, भागीरथ, हीरानन्द, मेघराज आदि थे। उपर्युक्त विवरण प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर ता० ६-६-६९ को अंकित किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० वी ४०९ में भी इस का सारांश दिया है।

२८६ से २९२

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १८७३ से १८९०==सन् १८१६ से १८३३, संस्कृत-नागरी

ये सात लेख यहां के विभिन्न मन्दिरों में मिले हैं। इन का विवरण इस प्रकार है—

(१) यह लेख मन्दिर नं० ३४ में है। दतिया के बुन्देल राजा पारीछत के राज्य में सं० १८७३ में भ० देवेन्द्रभूषण के शिष्य विजयकीर्ति तथा पं० परमसुख व भागीरथ के उपदेश से बलवन्तनगर निवासी ठकुरो बुलाखीदास ने ऋषभदेवमूर्ति की स्थापना की तथा इस मूर्ति के शिल्पी का नाम नौरैना था ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३६४

(२) यह लेख मन्दिर नं० ५७ में है। राजा पारीछत के राज्य में पं० परमसुख व भागीरथ के उपदेश से लाला लछमीचन्द द्वारा सं० १८८३ में मन्दिर का जीर्णोद्धार किया गया था तथा मणोराम बन्धु चम्पाराम ने यहाँ की यात्रा की थी ऐसा इस में वर्णन है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३७१

(३) यह लेख मन्दिर नं० २३ में है। इस में सं० १८८४ में मूलसंघ के भ० सुरेन्द्रभूषण तथा चन्देरी निवासी खंडेलवाल सभासिंघ के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी० १४८

(४) यह लेख मन्दिर नं० ३७ में है तथा ऊपर के लेख जैसा ही है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी १४७

(५) यह लेख मन्दिर नं० ७६ में है। इस में सं० १८८८ तथा गोलानाथ यह शब्द अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४००

(६) यह लेख मन्दिर नं० ७७ के सामने चरणपादुका के पास है। सं० १८९० में मण्डलाचार्य विजयकीर्ति के शिष्य हीरानन्द, मेघराज, परमसुख, भागीरथ आदि के नामों का इस में उल्लेख है।

उपर्युक्त, शि० क्र० वी ४०२

(७) यह लेख मन्दिर नं० ४३ में है। राजा पारीछत के राज्य में पं० परमसुख व भागीरथ के उपदेश से बलवन्तनगर के चौधरी कल्याण-साहि द्वारा सं० १८९० में मन्दिर निर्माण का इस में वर्णन है।

उपर्युक्त, शि० क्र० वी ३६५

२९३-२९४-२९५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

[सं०] १८९० = सन् १८३३, संस्कृत-नागरी

श्रीभट्टारकमूलसंघतिलके श्रीकुंदकुंदान्वये श्रीगोपाचलपट्टके गण-बलात्कारे हि वाग्गच्छके आकाशे नवनागचन्द्रमिलिते सोमे सिते कार्तिके मुनितिथ्यां च सुरेन्द्रभूषणयतेः संस्थापिते पादुके तेनैव कथिता सद्धसंवृद्धिः श्रेयस्सुधा।

उक्त लेख सोनागिरि के तलहटी के मन्दिर क्र० १२ के आँगन में स्थापित चरणपादुकाओं के चारों ओर वृत्ताकार दो पंक्तियों में है। इस में कार्तिक शु० ७ सोमवार, १८९० (जो संवत् होना चाहिए) के दिन मूलसंघ-कुन्दकुन्दान्वय बलात्कारगण-वाग्गच्छ-गोपाचलपट्ट के सुरेन्द्रभूषण यति की पादुकाओं की स्थापना का उल्लेख है। इन पादुकाओं के समीप दो अन्य छत्रियों में भी चरणपादुकाएँ है जिन पर भ० हरेन्द्रभूषण तथा

भ० जिनेन्द्रभूषण के नाम पढ़े जा सकते है किन्तु लेखों का अन्य भाग अस्पष्ट है। उक्त विवरण ता० ६-६-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर अंकित किया गया था। वर्तमान भट्टारक चन्द्रभूषणजी के कथनानुसार उन के पूर्व के पट्टाधिकारी जिनेन्द्रभूषण के देहान्त की तिथि सं० २००० तथा उन के पूर्ववर्ती भट्टारक हरेन्द्रभूषण की देहान्ततिथि सं० १९८८ थी। भ० हरेन्द्रभूषण सं० १९४५ मे पट्टारूढ हुए थे।

प्रथम (सं० १८९० के) लेख का सारांश
रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४११ में भी मिलता है।

२९६ से ३०६

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १८९९ से १९४५ = सन् १८४२ से १८८९

संस्कृत-नागरी

ये ग्यारह लेख यहाँ के विभिन्न मन्दिरों में प्राप्त हुए है। विवरण इस प्रकार है—

(१) यह लेख मन्दिर नं० १३ में है। दतिया के बुन्देल राजा विजयबहादुर के राज्य मे स० १८९९ में बलवन्तनगर के नन्दकिशोर, मणीराम, भोलानाथ और परिवार द्वारा इस मन्दिर का निर्माण किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४१०

(२) यह लेख मन्दिर नं० ७६ की एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस में बलात्कारगण के गोपाचलपट्ट के भ० जिनेन्द्रभूषण, महेन्द्रभूषण व

राजेन्द्रभूषण के नाम अंकित हैं तथा सं० १९१३ यह मूर्तिस्थापना का वर्ष बताया है।

उपर्युक्त शि० क्र० बी ३९२

(३) यह लेख मन्दिर नं० ५२ में है। इस में सं० १९१७ में ललतपुर के रामचन्द्र का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३६९

(४) यह लेख मन्दिर नं० ६५ व ६६ के बीच चरणपादुका के पास है। सं० १९१८ के अतिरिक्त इस का अन्य विवरण अस्पष्ट है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३७६

(५) यह लेख मन्दिर नं० १८ में है। सं० १९२३ में भ० चारुचन्द्रभूषण तथा कोलारस निवासी अग्रवाल मीतलगोत्रीय चौधरी रामकिसन, बन्धु लालीराम तथा ईश्वरलाल के नाम इस में अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी १४२

(६) यह लेख मन्दिर नं० २५ में है। मूलसंघ-कुन्दकुन्दान्वय के भ० राजेन्द्रभूषण तथा लम्बकंचुक अन्वय के उदयराज बन्धु खड्गसेन के नाम तथा सं० १९२५ यह स्थापना वर्ष इस मे अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी १४६

(७) यह लेख मन्दिर नं० २३ में है। मूलसंघ-सेनगण के भ० लक्ष्मीसेन के उपदेश से सं० १९३० में खंडेलवाल सेठ सुपुण्यचन्द्र व पत्नी केसरबाई द्वारा जिनमूर्ति स्थापना का इस में वर्णन है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी १४५

(८) यह लेख मन्दिर न० ६ में है। इस का तात्पर्य ऊपर के लेख जैसा ही है (सिर्फ सुपुण्यचंद्र के स्थान में चन्द इतना ही अंश पढ़ा गया है)।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी १३८

(९) यह लेख मन्दिर नं० ९ में है। सन् १८७३ व सन् १८७८ में सोनागिरि पहाड़ी पर मन्दिर निर्माण के अधिकार के बारे में भ० शीलेन्द्रभूषण व भ० चारुचन्द्रभूषण में कुछ विवाद चला था उस का राजा भवानीसिंह द्वारा निपटारा किया गया ऐसा इस में वर्णन है।

रि० ए० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४१०

(१०) यह लेख मन्दिर नं० ७५ में है। इस में सं० १९३४ में भ० चारुचन्द्रभूषण तथा फलटण ग्राम के बालचन्द नानचन्द का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३७९

(११) मन्दिर नं० ४ के समीप चरणपादुका के पास यह लेख है। इस में सं० १९४५ में मूल संघ बलात्कारगण के गोपाचल पट्ट के भ० चारुचन्द्रभूषण का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३५९

अनिश्चित समय के लेख

२०७

डीग दरवाजा (मथुरा, उत्तरप्रदेश)

प्राकृत-ब्राह्मी

यह एक अर्हत् प्रतिमा का पादपीठ लेख है। अधिक विवरण प्राप्त नहीं है।

रि० ए० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ५९३

३०८

मट्टेवाड (वरंगल, आन्ध्र)

संस्कृत-कन्नड़

इस लेख में मूलसंघ-कोण्डकुन्दान्वय के त्रिभुवनचन्द्र भट्टारक के समाधिमरण का वर्णन है। यह शिला भोगेश्वर मन्दिर में पड़ी है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी १२२

३०९

मद्रास

तमिल

इस ताम्रपत्र में शेलेट्टि कुडियन् द्वारा इरुमुडिशोळपुरम के नगरत्तार से खरीदी भूमि पर पल्लि (जिन मन्दिर) के निर्माण का वर्णन है। उंबलनाडु तथा पुरंकरंबैनाडु के अन्तर्गत दनमलिप्पूंडि की कुछ भूमि मन्दिरनिर्माता को खेती के लिए दी गयी थी। सुन्दरशोलपेरुंबल्लि के लिए पल्लिच्छन्दम के रूप मे नन्दिसंघ के मौनिदेवर उपनाम संदणंदि तथा ऋषि व आर्यिकाओं के लिए दान देने हेतु कुछ भूमि अर्पित की गयी थी।

रि० इ० ए० ६१-६२ शि० क्र० ए० २९
ट्रैन्जेक्शन्स ऑफ दि आर्कि० सोसाइटी ऑफ
साउथ इंडिया १९५८-५९- पृ० ८४ पर प्रकाशित।

३१० से ३६९

देवगढ़ (झांसी, उत्तरप्रदेश) संस्कृत-नागरी

यहाँ के जैन मन्दिरों में भग्न पाषाणखण्डों पर निम्नलिखित शब्द पढ़े गये हैं। अधूरे और अस्पष्ट होने से इन के समय का तथा उद्देश्य का निश्चय नहीं होता तथापि ये मूर्तिस्थापकों तथा यात्रियों के नाम प्रतीत होते हैं। लेखों का विवरण इस प्रकार है—

मन्दिर नं० १ छिचपइ

मन्दिर नं० ३ देवं चेल्ली प्रणमति
,, ब्रह्मचा (रि) वावः प्रणमति
,, पंडित शुभंक (र)
,, —रदेवः पंडित ला····का परमश्री सह····र्जा
,, धाहली

मन्दिर नं० ४ भा(व)णइंदि
,, मामूयी तिणि प्रणमति
,, प्रणमति··जाटी प्रणमति
,, नयकीर्ति शिष्य गुणचन्द्र
,, राजस्य
,, कारा (पितः)
,, पुनमोद्र

मन्दिर नं० ११ सिंहान्वय के माधवसिंह, अजितसिंह तथा उन के शिष्य
,, श्री(ध) र्मासीव पणी(तु)

मन्दिर नं० १२ माणिक्यनंदि के शिष्य रुद्रनंदि के शिष्य मावनंदि-ज्ञान-शिलाक्षर के रचयिता

मन्दिर नं० १३ वीतचन्द्र, त्रिभुवनकीर्ति, कीर्तिकौमुदीपुर
,, सित्तिचाभुड
,, श्रमणभद्रः
,, श्रीविशा-कीर्ति
,, श्रीजसकीर्ति भट्टारक

मन्दिर नं० १४ श्रीदेवचन्द्र पंचशिखिक
,, वोन्दसेण्ड
,, देवकीर्ति

मन्दिर नं० १५ पंचणोम
,, सधालमिदं
,, घटपिद
,, पदलपूदु अचु
,, पुर्वापुषण्य
,, शिष्य वीरचन्द्र
,, साभज
,, वुधु
,, रिवा

मन्दिर नं० १६ वो
,, मोतद
,, अर्जिका सोना प्रणमति
,, पंडित माघनंदिनां शिष्य पंडित पद्मनंदि प्रणमति
,, खोदा धनपनारितु सत्ती
,, आमदेव
,, अर्जिष्माकि
,, पं लक्ष्मनंदि, पं० श्रीचन्द्र, पं०ईशनंदि

मन्दिर नं० १६ हविचन्द्र

,, अर्जिका सिरिमा प्रणमति चेल्ली मीता

,, कलः प्रणमति

,, अर्जिका पद्मश्री प्रणमति नित्यं चेल्ली संजमश्री …
रत्नश्री, ललितश्री, संजमश्री, जयश्री

मन्दिर नं० १७ गहुं

मन्दिर नं० १९ देशीगण के आचार्य

,, जिनयतिः प्रणमति

,, दिसरम

,, श्रीधीरणंदि

मन्दिर नं० २० उसदेविआयी, उदयनंदि, त्रिभुवनचन्द्र

,; …कनंदि

,, श्रीमोनसाह मोपतिः प्रणम्यति

,, आचार्य श्रीवीर (चन्द्र) के शिष्य श्री(त्रि)भुवनकीर्ति

,, विवे

मन्दिर नं० २१ श्रीगुणनंदि पंडित(ऐसे दो लेख हैं)

,, लोकनंदि शिष्य गुणनंदि पंडित (,,)

,, लालसस्य

,, रोदलु……सवरी

,, पहाकरदेय

,, रुदु……वना

,, वल्लमधज्य

,, उधु…लक्ष्मी……वदिलु

मन्दिर नं० २२ श्रीमालव नगराट

मन्दिर नं० २८ रामचन्द्र पंडित, सहस्रकीर्ति पंडित के शिष्य माधवचंद्र

मन्दिर नं० ३० श्री सहस्रकीर्ति पंडित
बाहरी दीवाल श्रीनेमिदेव पंडित
,, श्री देवेंद्र पंडित, वासना (?) चन्द्र के शिष्य

रि० इ० ए० १९५६-५७ शि० क्र० सी १२४-५, १२७-८,१३०,१३२, १३४ से १३८, १४१ से १७३, १७५, १७९ से १८२, १८४ से १८६, १८८, १९० से २०३, २०५, २१२ और २१३। क्र० १२९, १३१, १३३, १४०, १७६-८ १८७ और २०६-७ अस्पष्ट बताये गये हैं।

३७० से ३७५

देवगढ़ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० १९ में सरस्वती मूर्ति के पादपीपठ पर एक लेख है। इस में चन्देरी के राजा दुर्जनसिंह का तथा मूर्ति की स्थापना करने वाले त्रिभुवनकीर्ति की गुरुपरम्परा का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० सी ४१७

यहीं के मन्दिर नं० १४ में प्राप्त एक लेख में चन्दमदेव की पत्नी के सहगमन का वर्णन है तथा मन्दिर नं० ७ के एक लेख में महाराजकुमार तेजसिंह का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० सी ५१५, ५१३

[क्र० ५०९ से ५१२ तक के यहाँ के लेख अस्पष्ट बताये गये हैं तथा ५१७ में यात्रियों के नाम हैं ऐसा कहा गया है।]

यहीं के मन्दिर नं० २५ के एक पाषाणखण्ड पर साढा यह नाम पढ़ा गया है। मन्दिर नं० २७ में निम्नलिखित शब्द पढ़े गये हैं—(१) साहण (२) दवणदि (३) देव इव सुगुण सोढो दर्सनं लहे सेढे। मन्दिर नं० २८ में पढ़े गये अक्षर इस प्रकार हैं—रभ ···पजु ·· सुहाणूसियता।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० सी ३०७, ३०९-१०

नाम सूची

(सन्दर्भ पृष्ठों के हैं)

[अ]

[आ]

[इ]

[ई]

[उ]

[ऊ]

[ऋ]

[द]

[ध]

[न]

[प]

[म]

[ल]

[व]

[ह]

MĀṆIKACHANDRA D. J. GRANTHAMĀLĀ

* The Serial Numbers marked with asterisk are out of print.

*1. **Laghīyastraya-ādi-saṁgrahaḥ** : This vol. contains four small works : 1) *Laghīyastrayam* of Akalaṅkadeva (*c.* 7th century A. D.), a small Prakaraṇa dealing with *pramāṇa*, *naya* and *pravacana*. Akalaṅka is an eminent logician who deserves to be remembered along with Dharmakīrti and others. His works are very important for a student of Indian logic. Here the text is presented with the Sk. commentary of Abhayacandrasūri. 2) *Svarūpasaṁbodhana* attributed to Akalaṅka, a short yet brilliant exposition of *ātman* in 25 verses. 3-4) *Laghu-Sarvajña-siddhiḥ* and *Bṛhat-Sarvajña-siddhiḥ* of Anantakīrti. These two texts discuss the Jaina doctrine of Sarvajñatā. Edited with some introductory notes in Sk. on Akalaṅka, Abhayacandra and Anantakīrti by PT. KALLAPPA BHARAMAPPA NITAVE, Bombay Saṁvata 1972, Crown pp. 8-204, Price As. 6/-.

*2. **Sāgāra-dharmāmṛtam** of Āśādhara : Āśādhara is a voluminous writer of the 13th century A. D., with many Sanskrit works on different subjects to his credit. This is the first part of his *Dharmāmṛta* with his own commentary in Sk. dealing with the duties of a layman. PT. NATHURAM PREMI adds an introductory note on Āśādhara and his works. Ed. by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1972, Crown pp. 8-246, Price As. 8/-.

*3. **Vikrāntakauravam** or **Sulocanānāṭakam** of Hastimalla (A.D. 13th century) : A Sanskrit drama in six acts. Ed. with an introductory note on Hastimalla and his works by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1972, Crown pp. 4-164, Price As. 6/-.

*4. **Pārśvanātha-caritam** of Vādirājasūri : Vādirāja was an eminent poet and logician of the 10th century A. D. This is a biography of the 23rd Tīrthaṅkara in Sanskrit extending over 12 cantos. Edited with an introductory note on Vādirāja and his works by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1973, Crown pp. 18-198, Price As. 8/-.

*5. **Maithilīkalyāṇam** or **Sītānāṭakam** of Hastimalla : A Sk. drama in 5 acts, see No. 3 above. Ed. with an introductory note on Hastimalla and his works by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1973, Crown pp. 4-96, Price As. 4/-.

*6. **Ārādhanāsāra** of Devasena : A Prākrit work dealing with religio-didactic topics. Prākrit text with the Sk. commentary of Ratnakīrtideva, edited by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1973, Crown pp. 128, Price As. 4/6.

*7. **Jinadattacaritam** of Guṇabhadra : A Sk. poem in 9 cantos dealing with the life of Jinadatta, edited by PT. MANOHALAL, Bombay saṁvat 1973, Crown pp. 96, Price As. 5/-.

8. **Pradyumnacarita** of Mahāsenācārya : A Sk. poem in 14 cantos dealing with the life of Pradyumna. It is composed in a dignified style. Edited by

PTS. MANOHARLAL and RAMPRASAD, Bombay Saṁvat 1973, Crown pp. 230, Price As. 8/-.

9. **Cāritrasāra** of Cāmuṇḍarāya : It deals with the rules of conduct for a house-holder and a monk. Edited by PT. INDRALAL and UDAYALAL, Bombay Saṁvat 1974, Crown pp. 103, Price As. 6/-.

*10. **Pramāṇanirṇaya** of Vādirāja : A manual of logic discussing specially the nature of Pramāṇas. Edited by PTS. INDRALAL and KHUBCHAND, Bombay Saṁvat 1974, Crown pp. 80, Price As. 5/-.

*11. **Ācārasāra** of Vīranandi : A Sk. text dealing with Darśana, Jñāna etc. Edited by PTS. INDRALAL and MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1974, Crown pp. 2-98, Price As. 6/-.

*12. **Trilokasāra** of Nemichandra : An important Prākrit text on Jaina cosmography published here with the Sk. commentary of Mādhavacandra. Pt. Premi has written a critical note on Nemicandra and Mādhavacandra in the Introduction. Edited with an index of Gāthās by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1975, Crown pp. 10-405-20, Price Rs. 1/12/-.

*13. **Tattvānuśāsana-ādi-saṁgrahaḥ** : This vol. contains the following works. 1) *Tattvānuśāsana* of Nāgasena. 2) *Iṣṭopadeśa* of Pūjyapāda with the Sk. commentary of Āśādhara. 3) *Nītisāra* of Indranandi. 4) *Mokṣapañcāśikā*. 5) *Śrutāvatāra* of Indranandi. 6) *Adhyātmataraṅgiṇī* of Somadeva. 7) *Bṛhat-pañca-namaskāra* or *Pātrakesarī-stotra* of Pātrakesarī with a Sk. commentary. 8) *Adhyātmāṣṭaka* of Vādirāja. 9) *Dvā-*

trimśikā of Amitagati. 10) *Vairāgyamaṇimālā* of Śrīcandra. 11) *Tattvasāra* (in Prākrit) of Devasena. 12) *Śrutaskandha* (in Prākrit) of Brahma Hemacandra. 13) *Ḍhāḍasī-gāthā* in Prākrit with Sk. chāyā. 14) *Jñānosāra* of Padmasiṁha, Prākrit text and Sk. chāyā. PT. PREMI has added short critical notes on these authors and their works. Edited by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1975, Crown pp. 4-176, Price As. 14/-.

*14. **Anagāra-dharmāmṛta** of Āśādhara : Second part of the *Dharmāmṛta* dealing with the rules about the life of a monk. Text and author's own commentary. Edited with verse and quotation Indices by PTS BANSIDHAR and MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1976, Crown pp. 692-35, Price Rs. 3/8/-.

*15. **Yuktyanuśāsana** of Samantabhadra : A logical Stotra which has weilded great influence on later authors like Siddhasena, Hemacandra etc. Text published with an equally important commentary of Vidyānanda. There is an introductory note on Vidyānanda by PT. PREMI. Ed. by PTS. INDRALAL and SHRILAL, Bombay Saṁvat 1977, Crown pp 6-182, Price As. 13/.

*16. **Nayacakra-ādi-saṁgraha** : This vol. contains the following texts. 1) *Laghu-Naycakra* of Devasena, Prākrit text with Sk. chāyā. 2) *Nayacakra* of Devasena, Prākrit text and Sk. chāyā. 3) *Ālāpapaddhati* of Devasena. There is an introductory note in Hindī on Devasena and his *Nayacakra* by PT. PREMI. Edited by PT. BANSIDHARA with Indices, Bombay Saṁvat 1977, Crown pp. 42-148, Price As. 15/-.

*17. **Ṣaṭprābhṛtādi-saṁgraha** : This vol. contains the following Prākrit works of Kundakunda of venerable authority and antiquity. 1) *Darśana-prābhṛta*, 2) *Cāritra-prābhṛta*, 3) *Sūtra-prābhṛta*, 4) *Bodha-prābhṛta*, 5) *Bhāva-prābhṛta*, 6) *Mokṣa-prābhṛta*, 7) *Liṅga-prābhṛta*, 8) *Śīla-prābhṛta*, 9) *Rayaṇasāra* and 10) *Dvādaśānuprekṣā*. The first six are published with the Sk. commentary of Śrutasāgara and the last four with the Sk. chāyā only. There is an introduction in Hindī by PT. PREMI who adds some critical information about Kundakunda, Śrutasāgara and their works. Edited with an Index of verses etc. by PT. PANNALAL SONI, Bombay Saṁvat 1977, Crown pp. 12-442-32, Price Rs. 3/.

*18. **Prāyaścittādi-saṁgraha** : The following texts are included in this volume. 1) *Chedapiṇḍa* of Indranandi Yogīndra, Prākrit text and Sk. chāyā. 2) *Chedaśāstra* or *Chedanavati*, Prākrit text and Sk. chāyā and notes. 3) *Prāyaścitta-cūlikā* of Gurudāsa, Sk. text with the commentary of Nandiguru. 4) *Prāyaścittagrantha* in Sk. verses by Bhaṭṭākalaṅka. There is a critical introductory note in Hindī by PT. PREMI. Edited by PT. PANNALAL SONI, Bombay Saṁvat 1978, Crown pp. 16-172-12, Price Rs. 1/2/-.

*19. **Mūlācāra** of Vaṭṭakera, part I : An ancient Prākrit text in Jaina Śaurasenī, Published with Sk. chāyā and Vasunandi's Sk. commentary. A highly valuable text for students of Prākrit and ancient Indian monastic life. Edited by PTS. PANNALAL, GAJADHARALAL and SHRILAL, Bombay Saṁvat 1977, Crown pp. 516, Price Rs. 2/4/-.

20. **Bhāvasaṁgraha-ādiḥ :** This vol. contains the following works. 1) *Bhāvasaṁgraha* of Devasena, Prākrit text and Sk. chāyā. 2) *Bhāvasaṁgraha* in Sk. verse of Vāmadeva Paṇḍita. 3) *Bhāva-tribhaṅgī* or *Bhāvasaṁgraha* of Śrutamuni, Prākrit text and Sk. chāyā. 4) *Āsravatribhṅgī* of Śrutamuni, Prākrit text and Sk. chāyā. There is a Hindī Introduction with critical remarks on these texts by PT. PREMI. Edited with an Index of verses by PT. PANNALAL SONI, Bombay Saṁvat 1978, Crown pp. 8-284-28, Price Rs. 2/4/-.

21. **Siddhāntasāra-ādi-Saṁgraha :** This vol. contains some twentyfive texts. 1) *Siddhāntasāra* of Jinacandra, Prākrit text, Sk. chāyā and the commentary of Jñānabhūṣaṇa. 2) *Yogasāra* of Yogicandra, Apabhraṁśa text with Sk. chāyā. 3) *Kallāṇāloyaṇā* of Ajitabrahma, Prākrit text with Sk. chāyā. 4) *Amṛtāśīti* of Yogīndradeva, a didactic work in Sanskrit. 5) *Ratnamālā* of Sivakoṭi. 6) *Śāstrasārasamuccaya* of Māghanandi, a Sūtra work divided in four lessons. *Arhatpravacanam* of Prabhācandra, a Sūtra work in five lessons. 8) *Āptasvarūpam*, a discourse on the nature of divinity. 9) *Jñānalocanastotra* of Vādirāja (Pomarājasuta). 10) *Samavasaraṇastotra* of Viṣṇusena. 11) *Sarvajñastavana* of Jayānandasūri. 12) *Pārśvanātha-samasyā-stotra*. 13) *Citrabandhastotra* of Guṇabhadra. 14) *Maharṣi*-stotra (of Āśādhara). 15) *Pārśvanātha-stotra* or *Lakṣmīstotra* with Sk. commentary. 16) *Nemi-nātha-stotra* in which are used only two letters viz. *n* & *m*.. 17) *Śaṅkhadevāṣṭaka* of Bhānukīrti. 18) *Nijātmāṣṭaka* of Yogīndradeva in Prākrit. 19) *Tattvabhāvana*

or *Sāmāyika-pāṭha* of Amitagati. 20) *Dharmarasāyaṇa* of Padmanandi. Prākrit text and Sk. chāyā. 21) *Sārasamuccaya* of Kulabhadra. 22) *Aṁgapaṇṇatti* of Śubhacandra Prākrit text and Sk. chāyā. 23) *Śrutāvatāra* of Vibudha Śrīdhara. 24) *Śalākānikṣepaṇa-niṣkāsana-vivaraṇam*. 25) *Kalyāṇamālā* of Āśādhara. PT. PREMI has added critical notes in the Introduction on some of these authors. Edited by PT. PANNALAL SONI. Bombay Saṁvat 1979 Crown pp. 32-324, Price Rs. 1/8/-.

*22. **Nītivākyāmṛtam** of Somadeva : An important text on Indian Polity, next only to *Kauṭilya-Arthaśāstra*. The Sūtras are published here along with a Sanskrit commentary. There is a critical Introduction by PREMI comparing this work with Arthaśāstra. Edited by PT. PANNALAL SONI, Bombay Saṁvat 1979, Crown pp. 34-426, Price Rs. 1/12/-.

*23. **Mūlācāra** of Vaṭṭakera, part II : Prākrit text, Sk. chāyā and the commentary of Vasunandi, see No. 19 above. Bombay Saṁvat 1980, Crown pp. 332, Price Rs. 1/8/-.

24. **Ratnakaraṇḍaka-śrāvakācāra** of Samantabhadra : With the Sanskrit commentary of Prabhācandra. There is an exhaustive Hindī Introduction by PT. JUGAL KISHORE MUKTHAR, extending over more than pp. 300, dealing with the various topics about Samantabhadra and his works. Bombay Saṁvat 1982, Crown pp. 2-84-252-114, Price Rs. 2/-.

25. **Pañcasaṁgrahaḥ** of Amitagati : A good compendium in Sanskrit of the contents of *Gāmmaṭasāra.* Edited with a note on the author and his works by PT. DARBARILAL. Bombay 1927, Crown pp. 8-240, Price As. 13/-.

26. **Lāṭisaṁhitā** of Rājamalla : It deals with the duties of a layman and its author was a contemporary of Akbar to whom references are found in his compositions. There is an exhaustive Introduction in Hindī by PT. JUGALKISHORE. Edited by PT. DARBARILAL, Bombay Saṁvat 1948, Crown pp. 24-136, Price As 8/-.

27. **Purudevacampū** of Arhaddāsa : A Campū work in Sanskrit written in a high-flown style. Edited with notes by PT. JINADASA, Bombay Saṁvat 1985, Crown pp. 4-206, Price As. 12/-.

28. **Jaina-Śilālekha-saṁgraha :** It is a handy volume living the Devanāgarī version of *Epigraphia Carnatica* II (Revised ed.) with Introduction, Indices etc. by PROF. HIRALAL JAIN, Bombay 1928, Crown pp. 16-164-428-40, Price Rs. 2/8-.

29-30-31. **Padmacarita** of Raviṣeṇa : This is the Jaina recension of Rāma's story and as such indispensable to the students of Indian epic literature. It was finished in A. D. 676, and it has close similarities with *Paümcariu* of Vimala (beginning of the Christian era). Edited by PT. DARBARILAL, Bombay Saṁvat 1985, vol. i, pp. 8-512 : vol. ii, pp. 8-436 ; vol. iii, pp. 8-446. Thus pp. about 1400 in all, Price Rs. 4/8/-.

32-33. **Harivaṁśa-purāṇa** of Jinasena I : This is the Jaina recension of the Kṛṣṇa legend. These two volumes are very useful to those interested in Indian epics. It was composed in A. D. 783 by Jinasena of the Punnāṭa-saṁgha. There is a Hindī Introduction by PT. PREMIJI. Edited by PT. DARBARILAL, Bombay 1930, vol. i and ii, pp. 48-12-806, Price Rs. 3/8/-.

34. **Nītivākyāmṛtam,** a supplement to No. 22 above : This gives the missing portion of the Sanskrit commentary, Bombay Saṁvat 1989, Crown pp. 4-76, Price As. 4/-.

35. **Jambūsvāmi-caritam** and **Adhyātma-kamalamārtaṇḍa** of Rājamalla : See No. 26 above. Edited with an Introduction in Hindī by PT. JAGADISHCHANDRA, M. A., Bombay Saṁvat 1993, Crown pp. 18-264-4, Price Rs. 1/8/.

36. **Triṣaṣṭi-smṛti-śāstra** of Āśādhara : Sanskrit text and Marāṭhī rendering. Edited by PT. MOTILAL HIRACHANDA, Bombay 1937, Crown pp. 2-8-166, Price As. 8/-.

37. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol. I **Ādipurāṇa** (Saṁdhis 1-37) : A Jaina Epic in Apabhraṁśa of the 10th century A. D. Apabhraṁśa Text, Variants, explanatory Notes of Prabhācandra. A *model edition of an* Apabhraṁśa text, Critically edited with an Introduction and Notes in English by DR. P. L. VAIDYA, M. A., D. Litt., Bombay 1937, Royal 8vo pp. 42-672, Price Rs. 10/-.

37 (a). Rāmāyaṇa portion separately issued, Price Rs. 2.50.

38. **Nyāyakumudacandra** of Prabhācandra Vol. I: This is an important Nyāya work, being an exhaustive commentary on Akalaṅka's *Laghīyastrayam* with Vivṛti (see No. 1 above). The text of the commentary is very ably edited with critical and comparative foot-notes by PT. MAHENDRAKUMARA. There is a learned Hindī Introduction exhaustively dealing with Akalaṅka, Prabhācandra, their dates and works etc. written by Pt. KAILASCHANDRA. A model edition of a Nyāya text. Bombay 1938, Royal 8 vo. pp. 20-126-38-402-6, Price Rs. 8/.

39. **Nyāyakumudacandra** of Prabhācandra, Vol. II: See No. 38 above. Edited by PT. MAHENDRAKUMAR SHASTRI who has added an Introduction Hindī dealing with the contents of the work and giving some details about the author. There is a Table of contents and twelve Appendices giving useful Indices. Bombay 1941. Royal 8vo. pp. 20+94+403-930, Price Rs. 8/8/-.

40. **Varāṅgacaritam** of Jaṭā-Siṁhanandi : A rare Sanskrit Kāvya brought to light and edited with an exhaustive critical Introduction and Notes in English by PROF. A. N. UPADHYE, M. A., Bombay 1938, Crown pp. 16+56+392, Price Rs. 3/-.

41. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol. II (Saṁdhis 38-80) : See No. 37 above. The Apabhraṁśa Text critically edited to the variant Readings and Glosses, along with an Introduction and five Appendices by

DR. P.L. VAIDYA, M.A.,D.Litt., Bombay 1940. Royal 8vo. pp. 24+570. Price Rs. 10/-.

42. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol. III (Saṁdhis 81-102) : See No. 37 and 40 above. The Apabhraṁśas Text critically edited with variant Readings and Glosses by DR. P. L. VAIDYA, M.A., D. Litt. The Introduction covers a biography of Puṣpadanta, discussing all about his date, works, patrons and metropolis (Mānyakheṭa). PT. PREMI'S essay 'Mahākavi Puṣpadanta' in Hindī is included here. Bombay 1941. Royal 8vo pp. 32+28+314. Price Rs. 6/-.

42(a). **Harivaṁśa** portion is separately issued. Price Rs. 2.50.

43. **Ajanāpavanaṁjaya-nāṭakam** and **Subhadrā-nāṭikā** of Hastimalla : Two Sanskrit Dramas of Hastimalla (see also No. 3 above). Critically edited by PROF. M. V. PATWARDHAN. The Introduction in English is a well documented essay on Hastimalla and his four plays which are fully studied. There is an Index of stanzas from all the four plays. Bombay 1950. Crown pp. 8+68+120+128. Price Rs. 3/-.

44. **Syādvādasiddhi** of Vādībhasiṁha : Edited by PT. DARBARILAL with Introductions etc. in Hindī shedding good deal of light on the author and contents of the work. Bombay 1950 Crown pp. 26+32+34+80. Price Rs. 1-50.

45. **Jaina Śilālekha-saṁgraha.** Part II (see No. 28 above) : The texts of 302 Inscriptions (following A Guérinot's order) are given in Devanāgarī with summary

in Hindī. There is an Index of Proper Names at the end. Compiled by PT. VIJAYAMURTI, M.A. Bombay 1952. Crown pp. 4+520. Price Rs. 8/-.

46 **Jaina Śilālekha-saṁgraha,** Part III (see Nos. 28 & 45 above) : The texts of 303-846 inscriptions (following Guérinot's list) is given in Devanāgarī with summary in Hindī compiled by PT. VIJAYAMURTI, M.A. There is an Index of Proper Names at the end. The Introduction by SHRI G. C. CHAUDHARI is an exhaustive study of inscriptions. Bombay 1957. Crown pp. 8+178+592+42. Price Rs. 10/-.

47. **Pramāṇaprameyakalikā** of Narendrasena (A.D. 18th century): A Nyāya text dealing with Pramāṇa and Prameya. The Sanskrit text critically edited by Pt. DARBARILAL. The Hindī Introduction deals with the author and a number of topics connected with the contents of this work. Bhāratiya Jñānapīṭha Kashi, Varanasi 1961. Price Rs. 1.50.

48. **Jaina Śilālekha-saṁgraha,** Part IV (see Nos. 28, 45 & 46 above) : This vol. contains some 654 inscriptions along with 324 Pratimā-lekhas of Nagpur in Appendix. Compiled by DR. VIDYADHAR JOHARAPURKAR with an exhaustive study of the inscriptions in the Introduction and Indexes in the end. Varanasi Vīra Nirvāṇa Saṁvat-2491, Crown pp. 10+34+506. Price Rs. 7/-.

49. **Ārādhanāsamuccayo-Yogasāra Saṁgrahaśca :** This vol. contains two small sanskrit texts—1) Ārādhana samuccaya of Sri Ravicandra Mūnīndra

and 2) Yogasārasamuccaya of Sri Gurudas. Edited with indexes of verses and introductions by Dr. A. N. UPADHYE, Varanasi 1967, crown pp. 8+58. Price Re. 1/.

50. **Śṛgārārṇavacandrikā** of Vijayavarṇī. A hitherto unpublished work on Sanskrit poetics. Critically edited by Dr. V. M. Kulkarni with Introduction, detailed table of contents and six valuable Appendexes. Varanasi 1969, crown pp. 12+66+176. Price Rs. 3/-.

For copies please write to—

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA

3620/21 Netaji Subhash Marg,

Delhi—6 (India).